1964

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-6

पूर्व समय में मिथिला में विदेह नाम के राजा के राज्य करने के समय उसके अर्थधर्मानुशासक चार पण्डित थे—सेनक, पुक्कूस, काविन्द तथा देविन्द।

राजा ने बोधिसत्व के गर्भ में आने के दिन प्रातःकाल स्वप्न देखा—राजाङ्गण के चारों कोनों पर चार अग्नि-स्कन्ध। वे ऊँची चार-दीवारी में जितने ऊँचे उठकर जल रहे थे उनके बीच में जुगनू के समान अग्नि पैदा हुई। वह उसी क्षण चारों अग्नि-स्कन्धों को लांघकर ब्रह्मलोक तक जा पहुँची और सारे चक्रबाल को प्रकाशित कर दिया। जमीन पर पड़ा सरसों का दाना तक दिखाई देता था। देवताओं सहित सारे लोक माला-गन्धादि से पूजित थे। जनता आग में ही घूमती थी, किन्तु किसी का रोआँ भी गर्म नहीं होता था।

वह स्वप्न देखा तो राजा को डर लगा। वह सोचने लगा कि क्या होगा? इस चिन्ता में ही बैठे-बैठे उसने दिन चढ़ा दिया। चारों पण्डितों ने प्रातःकाल ही आकर पूछा, "देव! क्या सुखपूर्वक सोये?"

"आचार्यो! मेरे लिए सुख कहाँ है! मैंने ऐसा स्वप्न देखा है।"

सेनक पण्डित बोला, "महाराज! डरें नहीं। यह मङ्गल-स्वप्न है। आपकी उन्नति ही होगी।"

"ऐसा क्यों कहते हो?"

"महाराज! हम चारों पण्डितों को निष्प्रभ कर पाँचवाँ पण्डित पैदा होगा। हम चारों जने चारों अग्नि-स्कन्ध के समान हैं। बीच में उत्पन्न अग्नि-स्कन्ध के समान पाँचवाँ पण्डित होगा। देवताओं-सहित सारे लोक में वह सबसे निराला होगा।"

"अब वह कहाँ है?"

"महाराज! या तो उसने आज गर्भ में प्रवेश किया होगा अथवा माता के गर्भ से बाहर आया होगा।"

ये सारी बातें उसने अपने विद्या-बल से ऐसे बताईं मानो दिव्य-दृष्टि से देखकर कह रहा हो।

राजा ने यह बात याद रखी। मिथिला के चारों द्वार पर प्राचीन यव मञ्झक, दक्षिणयव मञ्झक और उत्तरयव मञ्झक आदि चार निगम थे। उनमें से प्राचीन यव मञ्झक में श्रीवर्धन नाम का सेठ रहता था। उसकी सुमना देवी नाम की भार्या थी। जिस दिन राजा ने स्वप्न देखा था, उसी दिन बोधिसत्व ने त्र्योत्रिंश भवन से च्युत हो उसकी कोख में प्रवेश किया। और भी हज़ार देव-पुत्रों ने त्र्योत्रिंश-भवन से च्युत हो उसी गाँव में सेठ अनुसेठों के कुलों में प्रवेश किया।

दस महीनों के बीतने पर सुमना देवी ने स्वर्ण-वर्ण पुत्र को जन्म दिया। उस समय शक्र ने मनुष्य-लोक की ओर देखते हुए जाना कि बोधिसत्व ने माता की कोख से जन्म ग्रहण किया है। उसने सोचा, इस बुद्धांकुर को सारे सदेव-लोग में प्रकट करना उचित है। जिस समय बोधिसत्व माता की कोख से निकले वह अदृश्य रूप में आया और उनके हाथ पर एक जड़ी-बूटी रख, अपने स्थान को ही चला गया। बोधिसत्व ने उसे मुट्ठी में दबा लिया। माँ की कोख से बाहर आते समय उसने माँ को थोड़ा भी दुख नहीं दिया था। जल-पात्र से जल बाहर आने की तरह सुखपूर्वक ही बाहर आया था।

माता ने उसके हाथ में जड़ी देखी तो पूछा, "तात! क्या मिला है?"

"अम्मा, औषध है।" कह उसने वह औषध माता के हाथ पर रखदी और बोला, "माँ, यह औषध लेकर किसी भी रोग के रोगी को दें।"

उसने प्रसन्न हो श्रीवर्धन सेठ से यह बात कही। सेठ के सिर में सात वर्ष से दर्द था। वह प्रसन्न हुआ और सोचने लगा—'माता के गर्भ से बाहर आने के समय ही औषध लेकर आया है। पैदाइश के समय ही अम्मा से बातचीत करता है। इस प्रकार के पुण्यवान् द्वारा दी गई औषध बहुत प्रभाव वाली होगी। उसने वह जड़ी ली और पत्थर पर रगड़कर थोड़ी माथे पर लगा ली। सात वर्ष का सिरदर्द कमल के पत्ते से पानी के उड़ जाने की तरह जाता रहा।

उसे बड़ी प्रसन्नता हुई कि औषध बड़ी गुणकारक है। बोधिसत्व के औषध लेकर आने की बात सभी जगह प्रकट हो गई। सभी प्रकार के रोगी सेठ के घर पहुँच औषध माँगने लगे। सभी को पत्थर पर घिस, पानी में घोलकर थोड़ी औषध दी जाती। दिव्य-औषध के शरीर पर लगते ही सारी बीमारी शान्त हो जाती। सुखी मनुष्य औषध का गुणगान करते जाते कि श्रीवर्धन के घर की औषध बड़ी गुणकारक है।

बोधिसत्व के नाम-ग्रहण के दिन महासेठ ने सोचा—'मेरे पुत्र के लिए दादा आदि की परम्परा का नाम नहीं चाहिये। यह औषध-नामक ही हो।' उसने उसका नाम महोषध कुमार ही रखा। तब उसके मन में आया—'मेरा पुत्र महा प्रज्ञावान् है। यह अकेला ही नहीं उत्पन्न हुआ होगा। इसके साथ और भी बच्चे पैदा हुए होंगे।' उसने तलाश कराई तो पता लगा कि हज़ारों बच्चे पैदा हुए हैं। उस ने सभी के लिए कुमार-अलंकार भिजवाये तथा दाइयाँ भिजवाईं। 'ये मेरे पुत्र के सेवक होंगे'—सोच उसने बोधिसत्व के ही साथ उनका भी मङ्गल-उत्सव कराया। बच्चों को अलंकृत कर बीच-बीच में बोधिसत्व की सेवा में लाया जाता। उनके साथ खेलते-खेलते महोषध कुमार बढ़कर सात वर्ष की आयु होने पर स्वर्ण-प्रतिमा के समान सुन्दर हो गया।

गाँव के बीच उनके साथ खेलते समय कभी-कभी हाथी आदि के आ जाने से उनका क्रीड़ा-मण्डल टूट जाता। हवा-धूप के समय लड़कों को कष्ट होता। एक दिन जब लड़के खेल रहे थे, अकाल-मेघ उठ आया। यह देख हाथी के समान बल वाला महोषध कुमार भागकर शाला में चला गया। दूसरे लड़के भी पीछे दौड़े तो उन्होंने आपस में लड़खड़ाकर अपने घुटने आदि तुड़वा लिये।

महोषध कुमार ने सोचा, 'यहाँ क्रीड़ाभवन बनना चाहिये। तब कष्ट न होगा।' उसने लड़कों से कहा, "हम यहाँ हवा, धूप और वर्षा के समय खड़े होने, बैठने और लेटने योग्य एक शाला बनवायेंगे। एक-

एक कार्षापण लाओ।" उन हज़ार लड़कों ने वैसा ही किया। महोषध कुमार ने बड़े बढ़ई को बुलवाया और औज़ार देकर कहा, "यहाँ शाला बनाओ।" उसने 'अच्छा' कह औज़ार लिये, भूमि को बराबर करवाया, खूंटे गड़वाये और धागा खींचा। वह महोषध कुमार के मन की बात नहीं समझा। महोषध कुमार ने उसे धागा खींचने की विधि बताते हुए कहा, "उस प्रकार धागा न खींचकर अच्छी तरह धागा खींचो।"

"स्वामी! मैंने अपने शिल्प के अनुसार धागा खींचा। दूसरी तरह नहीं जानता।"

"जब तू इतना भी नहीं जानता तो हमारे मन के अनुसार शाला कैसे बनायेगा? धागा ला, मैं तुझे खींचकर बताऊँगा।"

उसने धागा लेकर स्वयं खींचा। ऐसा हुआ जैसे विश्वकर्मा ने धागा खींचा हो।

तब बढ़ई से पूछा, "ऐसे धागा खींच सकेगा?"

"स्वामी! नहीं खींच सकूँगा।"

"मेरे विचार के अनुसार बना सकेगा?"

"स्वामी! सकूँगा।"

महोषध कुमार ने उस शाला में बाहर की ओर मुँह करके ये सभी स्थान बनाने के लिए कहा—जैसे एक हिस्से में अनाथों के रहने की जगह, एक हिस्से में अनाथ स्त्रियों का प्रसूतिका-गृह, एक हिस्से में आगन्तुक श्रमण ब्राह्मणों का निवास-स्थान, एक हिस्से में आगन्तुक मनुष्यों का तथा एक हिस्से में आगन्तुक व्यापारियों के लिए सामान रखने की जगह। उसने वहीं क्रीड़ाभवन, वहीं न्यायालय तथा वहीं धर्म-सभा का स्थान बनवाया। शाला के कुछ ही दिन में बनकर समाप्त होने पर उसने चित्र-शिल्पियों को बुलवा, स्वयं विचार कर रमणीय चित्र बनवाये। शाला इन्द्र की सुधर्मा सभा के भवन के समान हो गई।

तब यह सोचा कि इतने से ही शाला की शोभा नहीं है, पुष्करिणी

भी बनवानी चाहिये, उसने पुष्करिणी बनवाई और कारीगर को बुलवाकर अपनी ही योजना के अनुसार 'बनवाई' देकर हज़ार जगह टेढ़ी और सौ तीर्थों वाली पुष्करिणी बनवाई। पाँच प्रकार के कमलों से आच्छादित वह पुष्करिणी नन्दन-वन के समान शोभा देती थी। उसके किनारे नाना प्रकार के फूलों और फलों वाले पेड़ लगवाकर नन्दन-वन सदृश उद्यान लगवाया। और उसी शाला में धार्मिक श्रमण ब्राह्मण और आगन्तुक मुसाफिरों आदि के लिए दान परम्परा चालू की।

उसकी वह करनी सर्वत्र ज्ञात हो गई। बहुत मनुष्य आने-जाने लगे। महोषध कुमार शाला में बैठे-बैठे जो-जो आते उन्हें उचित-अनुचित, योग्य-अयोग्य समझाता। झगड़ों का निर्णय करता। बुद्ध के समय जैसा समय हो गया।

तब विदेह राजा को याद आया कि सात वर्ष पहले चारों पण्डितों ने कहा था कि हमें परास्त कर पाँचवाँ पण्डित होगा। वह सोचने लगा कि वह इस समय कहाँ होगा! उसने चारों द्वारों से चारों पण्डितों को भेजा कि उसके निवास-स्थान का पता लगाएँ। शेष द्वारों से गये पण्डितों को महोषध पण्डित दिखाई नहीं दिया। पूर्व द्वार की ओर से जो पण्डित निकला था उसने शाला आदि को देखकर सोचा कि इस शाला के बनाने अथवा बनवाने वाला कोई पण्डित होगा। उसने मनुष्यों से पूछा, "यह शाला किस बढ़ई ने बनाई है?"

"यह शाला बढ़ई ने अपनी बुद्धि से नहीं बनाई! यह श्रीवर्धन सेठ के महोषध पण्डित नाम के पुत्र के विचारानुसार बनाई गई है।"

"पण्डित कितने वर्ष का है?"

"पूरे सात वर्ष का है।"

अमात्य ने राजा के स्वप्न देखने के दिन से गिनती करके देखा कि राजा के स्वप्न से मेल बैठता है। उसने राजा के पास दूत भेजा, "देव! प्राचीन यव मञ्झक ग्राम में श्रीवर्धन सेठ का सात वर्ष का महोषध पण्डित नाम का पुत्र है। उसने ऐसी शाला बनवाई है, ऐसी पुष्करिणी बनवाई है और ऐसा उद्यान बनवाया है। इस पण्डित को लेकर आऊँ अथवा न आऊँ?"

राजा ने सुना तो प्रसन्न हुआ। उसने सेनक पण्डित को बुलवाया और यह बात बताकर पूछा, "सेनक! क्या पण्डित को बुलवाएँ?" उसने ईर्ष्या के वशीभूत हो उत्तर दिया, "महाराज! शाला आदि बनवाने मात्र से ही पण्डित नहीं होता। जो भी कोई यह सब बनवाता है, यह बड़ी बात नहीं है।" राजा ने उसकी बात सुनी तो चुप हो रहा—'इसमें कुछ न कुछ विशेष बात होगी।' उसने दूत को अमात्य के पास वापिस भेजा कि वहीं रहकर पण्डित की परीक्षा करे।

o o o

एक दिन जब बोधिसत्व क्रीड़ा-मण्डल में जा रहा था, एक बाज कसाई के तख्ते पर से माँस का टुकड़ा ले आकाश में उड़ गया। यह देख लड़के माँस का टुकड़ा छुड़ाने के लिए बाज के पीछे भागे। बाज भी जहाँ-तहाँ भागने लगा। वे ऊपर देख-देख उसके पीछे भागते-भागते पत्थरों आदि पर लड़खड़ाकर कष्ट पा रहे थे। महोषध पण्डित ने कहा, "उसे छुड़ाऊँ?"

"स्वामी, छुड़ाओ।"

"तो देखो।"

उसने बिना ऊपर देखे ही वायु-वेग से दौड़, बाज की छाया पर पहुँच, ज़ोर की आवाज़ की। उसके प्रताप से वह बाज की कोख को बींधती चली गई। उसने डर के मारे माँस छोड़ दिया। बोधिसत्व को जब पता लगा कि बाज ने माँस छोड़ दिया तो छाया की ओर ही देखते हुए उसे ज़मीन पर गिरने न देकर आकाश में ही रोक लिया। यह आश्चर्य देख जनता ने तालियाँ पीटते हुए बहुत हल्ला मचाया।

अमात्य ने यह समाचार जान राजा के पास संदेशा भेजा। राजा ने सेनक पण्डित के परामर्श से वापिस संदेश भिजवाया कि वहीं परीक्षा करे।

o o o

प्राचीन यव मज्झक ग्रामवासी एक आदमी पानी बरसने पर हल चलाने के इरादे से दूसरे गाँव से बैल खरीद लाया। उन्हें रातभर घर में रख, अगले दिन चरने के लिए घास के मैदान में ले गया।

बैल की पीठ पर बैठे-बैठे जब वह थक गया तो उतरकर एक पेड़ की छाया में आ रहा। बैठे-बैठे उसे नींद आ गई। उसी समय एक चोर बैलों को ले भागा। आँख खुली तो उसने बैलों को नहीं पाया। इधर-उधर ढूंढ़ने पर उसे बैल लेकर भागने वाला चोर दिखाई दिया। उसने भागकर उसे पकड़ा और पूछा, "मेरे बैलों को कहाँ लिए जा रहा है?"

"अपने बैलों को जहाँ मेरी इच्छा है, वहाँ ले जाता हूं।"

उनका विवाद सुन लोग इकट्ठे हो गये। जब वे शाला-द्वार के पास से गुजर रहे थे तो पण्डित ने उन्हें बुलवाया और पूछा, "क्यों झगड़ रहे हो?"

बैलों का मालिक बोला, "मैं इन्हें अमुक गाँव के अमुक आदमी से खरीदकर लाया और घर में रखकर घास के मैदान में ले गया। वहाँ मेरा प्रमाद देख, यह बैलों को लेकर भागा। मैंने इधर-उधर ढूंढ़ते हुए इसे देख भागकर पकड़ा। अमुक गाँव के लोग जानते हैं कि मैंने इन्हें खरीदा है।"

चोर बोला, "ये मेरे घर पैदा हुए हैं। यह झूठ बोलता है।"

पण्डित ने पूछा, "मैं तुम्हारा न्याय करूँगा। तुम मेरे फैसले को स्वीकार करोगे?"

"स्वीकार करेंगे।"

पण्डित ने सोचा कि जनता को भी विश्वास कराना चाहिए। इस लिए उसने पहले चोर से प्रश्न किया, "तूने इन बैलों को क्या खिलाया, क्या पिलाया?"

"यवागु पिलाया। तिल के लड्डू और उड़द खिलाये।"

तब बैलों के मालिक से पूछा।

उसका उत्तर था, "स्वामी, मुझ गरीब के पास यवागु आदि कहाँ! घास खिलाया है।"

पण्डित ने जनता का ध्यान उनके इस कथन की ओर आकर्षित किया और राई के पत्ते मँगवा, ऊखल में कुटवा, बैलों को पिलाये। बैलों ने खाया घास ही बाहर किया। पण्डित ने कहा, "यह देखें!"

फिर चोर से प्रश्न किया, "तू चोर है अथवा नहीं ?"

"चोर हूं।"

"तो अब से ऐसा काम न करना।"

उसने उसे पाँच शील दिये। अमात्य ने राजा को ज्यों का त्यों वह समाचार भिजवाया। राजा ने सेनक पण्डित के परामर्श से वापिस संदेश भिजवाया कि वहीं परीक्षा करे।

o o o

एक गरीब स्त्री नाना रंगों के धागों को गठिया कर बनी सूत को कण्ठी को गले से उतार, कपड़ों के ऊपर रख, पण्डित द्वारा बनवाई पुष्करिणी में स्नान करने के लिए उतरी।

एक दूसरी तरुणी स्त्री ने उसे देखा तो उसके मन में लोभ आया। उसने उसे उठाया और बोली, "अम्मा! यह बहुत ही सुन्दर है। कितने में बनी है? मैं भी अपने लिए ऐसी बनवाऊँगी! इसे ज़रा गर्दन में पहनकर इसको माप लूँ?"

उस सरल स्त्री ने जवाब दिया, "पहन ले।" वह उसे पहनकर चल दी।

दूसरी ने देखा तो जल्दी से निकली और वस्त्र पहन, दौड़कर उस के कपड़े पकड़ लिये, "मेरी कण्ठी लेकर कहाँ भागी जा रही है?"

"मैंने तेरी कण्ठी नहीं ली। मेरी गर्दन में मेरी कण्ठी है।"

यह झगड़ा सुन जनता इकट्ठी हो गई। पण्डित ने उन दोनों औरतों को बुलवाकर पहले चोरिणी से पूछा, "तू जब यह कण्ठी पहनती है तो कौन-सी सुगन्धि लगाती है?"

"मैं नित्य सर्व-संहारक सुगन्धि लगाती हूं।"

तब दूसरी से प्रश्न किया। उसका उत्तर था, "मुझ गरीब के पास कहाँ सर्व-संहारक सुगन्धि! मैं नित्य राई के फूलों की सुगन्धि का ही लेप करती हूं।'

पण्डित ने पानी की थाली मँगवाई और उस कण्ठी को उसमें डलवा दिया और फिर गन्धी को बुलाकर कहा, "इस थाली को सूँघकर पता लगा कि यह अमुक गन्ध है?"

उसने सूंघकर पता लगाया कि यह राई के फूलों की सुगन्ध है। पण्डित ने जनता को यह बात जताकर उससे पूछा, "तू चोरिणी है, अथवा नहीं है?"

उसने चोरिणी होना स्वीकार किया।

अमात्य ने यह समाचार भी राजा के पास भेजा। राजा ने सेनक पण्डित के परामर्श से फिर वापिस संदेश भिजवाया कि वहीं परीक्षा करे।

2

कपास के खेत की रखवाली करने वाली एक स्त्री ने खेत की रखवाली करते समय, वहीं से साफ कपास ली, बारीक सूत काता और गोला बनाकर अपने पल्ले में रखा। फिर गाँव को लौटते समय महोषध पण्डित की बनवाई पुष्करिणी में नहाने के लिए उतरी। एक दूसरी स्त्री ने उसे देखा तो उसके मन में लोभ आ गया। उसने वह गोला लिया और "अम्मा, तूने अच्छा सूत काता है" कह आश्चर्य प्रकट करते हुए उसे पल्ले में डालकर चल दी। पण्डित ने चोरिणी से पूछा, "तूने गोला बनाते समय अन्दर क्या रखा था?"

"स्वामी! विनौला।"

उसने दूसरी से पूछा, "तूने गोला बनाते समय अन्दर क्या रखा था?"

"स्वामी! तिम्बरू का बीज।"

उसने दोनों के कथन की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया। सूत का गोला उधेड़ा गया। उसमें से तिम्बरू का बीज ही निकला। महोषध पण्डित ने उससे चोरिणी होना स्वीकार कराया। जनता ने प्रसन्न हो हज़ारों साधुकार दिये कि मुक़दमे का ठीक फैसला हुआ।

o o o

एक स्त्री पुत्र को लिये हुए मुँह धोने के लिए पण्डित की पुष्करिणी पर पहुँची। उसने पुत्र को नहलाया और अपने वस्त्र पर बिठा, स्वयं

मुँह धोकर स्नान करने के लिये उतरी। उसी समय एक यक्षिणी उस बच्चे को देख खाने की इच्छा से स्त्री का वेश बना वहाँ पहुँची और पूछा, "सखी! बच्चा सुन्दर है। यह तेरा बच्चा है?"

"अम्मा, हाँ।"

"मैं इसे दूध पिलाऊँ?"

"पिला।"

उसने उसे लिया। थोड़ी देर खिलाया-पिलाया। फिर लेकर भाग निकली। दूसरी ने यह देखा तो दौड़कर उसे पकड़ा, "मेरे पुत्र को कहाँ ले जाती है?"

"तेरा पुत्र कहाँ से आया! यह मेरा पुत्र है।"

वे दोनों झगड़ती हुई शाला के सामने से जा रही थीं। पण्डित ने झगड़ा सुना तो उन्हें बुलाकर पूछा, "क्या है?" उसे झगड़े का कारण मालूम हो गया। जब उसने यक्षिणी की आँखें देखीं तो वे न झपकती थीं और वे लाल थीं। महोषध पण्डित ने जान लिया कि यह यक्षिणी है। तो भी उसने दोनों से पूछा, "मेरे फैसले को स्वीकार करोगी?"

"हाँ, स्वीकार करेंगी।"

पण्डित ने एक लकीर खींची और बच्चे को लकीर के बीच में लिटा कर यक्षिणी को उसके हाथ और माँ को उसके पाँव पकड़ाकर कहा, "दोनों खींचो। जो खींचकर ले जायगी पुत्र उसी का।"

दोनों ने खींचा। बच्चा खींचे जाने पर तकलीफ के मारे चिल्ला पड़ा। माँ को ऐसा हुआ जैसे कि उसका हृदय फट गया हो। वह बच्चे को छोड़ एक ओर खड़ी हो रोने लगी। पण्डित ने लोगों से पूछा, "बच्चे के प्रति माता का हृदय कोमल होता है अथवा अमाता का?"

"पण्डित! माता का हृदय।"

"अब क्या यह जो बच्चे को लेकर खड़ी है वह माता है अथवा जिसने बच्चे को छोड़ दिया है, वह माता है?"

"पण्डित! जिसने बच्चे को छोड़ दिया है।"

"उस बच्चे को चुराने वाली को तुम पहचानते हो?"

"पण्डित, हम नहीं पहचानते हैं।"

"यह यक्षिणी है। उसने बच्चे को खाने के लिये लिया था।"

"पण्डित, यह तुमने कैसे जाना ?"

"इसकी आँखें नहीं झपकतीं। इसकी आँखें लाल हैं। इसकी छाया नहीं है। यह संकोच-रहित है और यह निर्दय है।"

तब उससे पूछा. "तू कौन है ?"

"स्वामी ! मैं यक्षिणी हूं।"

"अन्ध बाले ! पहले भी पाप करके यक्षिणी हुई, अब फिर पाप कर रही है। ओह ! तू कितनी मूर्ख है !"

० ० ०

कुबड़ा होने से 'गोल' और काला होने से 'काल'। इस प्रकार 'गोल-काल' नाम का एक आदमी था। उसने सात वर्ष तक किसी के घर में काम करके भार्या प्राप्त की। उसका नाम था दीर्घ-ताड़। एक दिन 'गोल-काल' ने उसे बुलाकर कहा, "भद्रे ! पूड़े पका। माता-पिता को देखने जायेंगे।"

'दीर्घ-ताड़' ने उसे तीन बार मना किया, 'तुझे माता-पिता से क्या ?' गोल-काल ने बार बार कह पूड़े पकवाये, पाथेय लिया और दीर्घ-ताड़ को साथ ले निकल पड़ा। रास्ते में एक छिछली नदी दिखाई दी। वे दोनों जने पानी से डरने वाले थे, इसलिए नदी को पार करने की हिम्मत न कर किनारे पर ही खड़े रहे। तब तक 'दीर्घ-पीठ' नाम का एक मनुष्य नदी के तट पर घूमता-घूमता वहाँ आ पहुँचा। उन्होंने उससे पूछा, "मित्र ! यह नदी गहरी है या छिछली ?"

वह समझ गया कि ये पानी से डरने वाले हैं। बोला, "बहुत गहरी। प्रचण्ड मगरमच्छों वाली।"

"मित्र ! तू कैसे पार जायेगा ?"

"यहाँ के मगरमच्छों का हमसे परिचय है, इसलिये हमें कष्ट नहीं देते।"

"तो हमें भी ले चल।"

उसने 'अच्छा' कह स्वीकार किया। उन्होंने उसे खाने-पीने की चीज़ें दीं। खा-पी चुकने पर बोला, "पहले किसे ले चलूँ ?"

"अपनी सखी को ले जा। मुझे पीछे ले चलना।"

उसने उसे कंधे पर बिठाया और खाने का सारा सामान भी लिए नदी में उतरा। थोड़ी दूर जाकर वह उकड़ू बैठा और उसी तरह झुका-झुका उस पार चला गया। 'गोल-काल' किनारे पर खड़ा-खड़ा सोचने लगा—'कितनी गहरी है यह नदी! इतने लम्बे आदमी का भी यह हाल है। मेरे लिये तो असह्य होगी।' दीर्घ-पीठ भी नदी के बीच पहुँचने पर बोला, "भद्रे! मैं तेरा पालन-पोषण करूँगा। वस्त्र-अलंकार, दास-दासी से घिरी रहेगी। यह बौना तेरे लिये क्या करेगा? मेरा कहना मान।"

"स्वामी! यदि मुझे नहीं छोड़ोगे, तो तुम्हारा कहना करूँगी।"

दूसरे तट पर पहुँच वे दोनों ही खाते-पीते आगे बढ़ गये। गोल-काल की ओर देखते हुए बोले, "पड़ा रह तू यहीं पर!" गोल-काल समझ गया कि दोनों उसे छोड़ भागे जा रहे हैं। वह इधर-उधर भागा। नदी में थोड़ा उतरा। भय के मारे रुका। फिर क्रोध आया। उसने सोचा कि चाहे मरुँ, चाहे जीऊँ, और नदी में उतर पड़ा। नदी छिछली थी ही। वह जल्दी से उस पार जा पहुंचा और भागकर दीर्घ-पीठ को जा घेरा, "रे दुष्ट! मेरी भार्या को कहाँ लिये जा रहा है?"

दूसरे ने भी उसे गर्दन से पकड़ धक्का देते हुए कहा, "अरे दुष्ट बौने! यह तेरी भार्या कहाँ से आयी! यह मेरी भार्या है।"

गोल-काल ने दीर्घ-ताड़ का हाथ पकड़ा, "कहाँ जाती है! सात वर्ष तक घर में काम करके प्राप्त की हुई तू मेरी भार्या है।"

इस प्रकार परस्पर झगड़ते हुए वे महोषध पण्डित की शाला के पास आ पहुँचे। जनता इकट्ठी हो गई। पण्डित ने उनका हाल सुन, बुलाकर पूछा, "मेरा निर्णय स्वीकार करोगे?"

"स्वीकार करेंगे।"

उसने पहले 'दीर्घ-पीठ' को बुलाकर पूछा, "तेरा क्या नाम है?"

"स्वामी ! मेरा नाम दीर्घ-पीठ है।"

"तेरी भार्या का क्या नाम है ?"

उसे उसका नाम मालूम नहीं था। उसने कुछ दूसरा ही नाम बता दिया। तब पण्डित ने पूछा, "तेरे माता-पिता का क्या नाम है ?"

"अमुक नाम।"

"तेरी भार्या के माता-पिता का क्या नाम है ?"

उसे उनका भी नाम मालूम नहीं था, इसलिये कुछ दूसरा ही नाम बता दिया। पण्डित ने उसके कथन की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट किया और उसे दूर भेज गोल-काल को बुलाकर इसी प्रकार से सभी प्रश्न पूछे। गोल-काल को ठीक-ठीक मालूम रहने से उसने यथार्थ रूप से ठीक-ठीक बता दिये। उसे भी दूर भेज, दीर्घ-ताड़ को बुलवाकर प्रश्न पूछे गये—

"तेरा क्या नाम है ?"

"स्वामी ! मेरा नाम दीर्घ-ताड़ है।"

"तेरे स्वामी का क्या नाम है ?"

उसने भी न जानने के कारण कुछ और ही बता दिया।

"तेरे माता-पिता का क्या नाम है ?"

उसने ठीक-ठीक बता दिया।

"तेरे स्वामी के माता-पिता का क्या नाम है ?"

उसने बकवास करते हुए कुछ भी नाम बता दिये। तब महोषध पण्डित ने उन दोनों को भी बुलवा जनता से पूछा, "इसका कहना दीर्घ-पीठ के कहने से मेल खाता है अथवा गोल-काल के कथन के साथ ?"

स्वामी और चोर का स्पष्ट निर्णय हो गया।

o o o

को प्रकट करूँ !' उसने आदमी का रूप बनाया और रथ का पिछला हिस्सा पकड़ दौड़ने लगा। रथ में बैठे आदमी ने पूछा, "तात ! क्यों आया है ?"

"तुम्हारी सेवा करने के लिए।"

उसने 'अच्छा' कह स्वीकार किया। जब वह रथ से उतर शारीरिक-कृत्य करने गया, शक्र ने रथ में बैठ ज़ोर से रथ हाँक दिया। रथ के मालिक ने उसे रथ लिए जाते देखा तो टोका, "रुक-रुक ! मेरा रथ कहाँ लिए जाता है ?"

"तेरा रथ दूसरा होगा। यह तो मेरा रथ है।"

दोनों झगड़ते हुए शाला-द्वार पर आ पहुँचे। महोषध पण्डित ने झगड़े का कारण जान दोनों से प्रश्न किया, "मेरे निर्णय को स्वीकार करोगे ?"

"हाँ ! स्वीकार करेंगे।"

"मैं रथ को हाँकता हूं। तुम दोनों रथ को पीछे से पकड़कर आओ। जो रथ का स्वामी होगा, वह रथ नहीं छोड़ेगा; दूसरा छोड़ देगा।"

यह कहकर उसने अपने आदमी को आज्ञा दी कि रथ हाँके। उसने वैसा ही किया। दोनों जने पीछे से रथ को पकड़े चले। रथ का मालिक थोड़ी दूर जाकर, रथ के साथ दौड़ न सकने के कारण, रथ को छोड़ खड़ा हो गया। शक्र रथ के साथ दौड़ता ही चला गया। महोषध पण्डित ने रथ रुकवा आदमियों को कहा, "एक आदमी थोड़ी ही दूर जा रथ को छोड़ खड़ा हो गया। यह रथ के साथ-साथ दौड़ता हुआ रथ के साथ ही रुका। इसके शरीर में पसीने की बूँद भी नहीं है। न साँस ही चढ़ी है। यह निर्भय है। इस की पलकें भी नहीं हैं। यह देवेन्द्र शक्र है।"

तब उसने प्रश्न किया, "क्या तू देवराज इन्द्र है ?"

"हाँ।"

"किसलिए आया ?"

"पण्डित ! तेरी ही प्रज्ञा को प्रसिद्ध करने के लिए।"

देवेन्द्र शक्र महोषध पण्डित की स्तुति करते हुए अपने स्थान को चला गया।

तब उस अमात्य ने स्वयं ही राजा के पास जाकर कहा, "महाराज ! पण्डित ने इस प्रकार रथ के झगड़े का निर्णय किया। उसने शक्र को भी पराजित कर दिया। आप इस पुरुष विशेष का परिचय क्यों नहीं प्राप्त करते ?"

राजा ने सेनक से पूछा, "क्यों सेनक ! पण्डित को बुलवाएँ ?"

"महाराज ! इतने से ही पण्डित नहीं होते। अभी सब्र करें। परीक्षा करके जानेंगे।"

3

पण्डित की परीक्षा लेने के लिए खदिर की लकड़ी मँगवाई गई। उसमें से बालिश्त-भर काटकर लकड़ी खरादने वाले से अच्छी तरह खरदवा कर प्राचीन यव मञ्झक ग्राम भेजी गई। आज्ञा दी गई—"यव मञ्झक ग्रामवासी पण्डित हैं। इस लकड़ी की जड़ और सिरे का पता लगाएँ। यदि नहीं लगा सकेंगे तो हजार दण्ड देना होगा।"

ग्रामवासी इकट्ठे हुए। उन्होंने देखा कि वे पता नहीं लगा सकते। उन्होंने सेठ को कहा—'शायद महोषध पण्डित जान सकें। उसे बुलाकर पूछें।' सेठ ने पण्डित को क्रीड़ा-मण्डल में से बुलवाया और वह बात बताकर पूछा, "तात ! हम नहीं जान सके। तू बता सकेगा ?"

यह बात सुनी तो पण्डित ने सोचा—'राजा को इसके सिरे या जड़ से काम नहीं है। मेरी परीक्षा लेने के लिए ही भेजा होगा।' यह सोच बोला, "तात ! लाएँ। बताऊँगा।"

उसने हाथ में लेते ही जान लिया कि यह सिरा है और यह जड़ है। तो भी जनता को विश्वास दिलाने के लिए पानी की थाली मँगवाई। फिर खदिर की लकड़ी को पानी की सतह पर रखा। जड़

भारी होने से जल में पहले डूबी। तब जनता से प्रश्न किया, "वृक्ष की जड़ भारी होती है या सिरा ?"

"पण्डित ! जड़ ।"

"तो इसका पहले डूबा सिरा देखो। यही जड़ है।"

इस प्रज्ञा से उसने जड़ और सिरा बता दिया। ग्रामवासियों ने भी राजा को कहला भेजा, "यह सिरा है और यह जड़ है।"

राजा ने सुना तो प्रसन्न हुआ। उसने पुछवाया, "इसका पता किसने लगाया ?"

उत्तर मिला, "श्रीवर्धन सेठ के पुत्र महोषध पण्डित ने।"

तब राजा ने सेनक से पूछा, "क्या उसे बुलवाएँ ?"

"देव ! सब्र करें। दूसरे ढंग से भी परीक्षा लेंगे।"

० ० ०

एक दिन एक स्त्री का और दूसरे पुरुष का सिर मँगवाकर दो सिर भेजे गये, "पता लगाओ कि कौन-सा स्त्री का सिर है और कौन-सा पुरुष का ? पता न लगा सकने पर हज़ार दण्ड।"

ग्रामवासियों को पता नहीं लगा। उन्होंने महोषध पण्डित से पूछा। पण्डित देखते ही पहचान गया। पुरुष के सिर की सीवन (!) सीधी होती है और स्त्री के सिर की सीवन टेढ़ी घूमकर जाती है। इस ज्ञान से उसने बता दिया कि यह स्त्री का सिर है और यह पुरुष का। ग्रामवासियों ने राजा को कहला भेजा।

० ० ०

एक दिन एक साँप और एक सर्पिनी भिजवाई गई, "बताएँ कि कौन-सा साँप है और कौन-सी सर्पिनी ?" ग्रामवासियों ने पण्डित से पूछा। उसने देखते ही पहचान लिया। वह जानता था कि साँप की पूँछ मोटी होती है, सर्पिनी की पतली। साँप का सिर मोटा होता है, सर्पिनी का लम्बा। साँप की आँखें बड़ी-बड़ी होती हैं, सर्पिनी की छोटी-छोटी। साँप का फन बँधा हुआ होता है, सर्पिनी का बिखरा हुआ। इस ज्ञान से उसने बता दिया कि यह सर्प है और यह सर्पिनी है।

० ०

एक दिन आज्ञा हुई, कि प्राचीन यव मज्झक ग्रामवासी हमारे पास एक बैल भेजें जो सर्वथा श्वेत हो; जिसके पैरों में सींग हों और जिसके सिर पर कूबड़ हो और जो नियम से तीन बार आवाज़ लगाता हो। यदि नहीं भेजेंगे तो हज़ार दण्ड।

लोग नहीं जान सके तो पण्डित से ही पूछा गया। उसने उत्तर दिया, "राजा सर्वश्वेत मुर्ग़ा मँगवा रहा है। उसके पाँव में नाखून होते हैं, इसलिए वह पाँव में सींग वाला कहलाता है; सिर पर कलंगी होने से वह सिर पर कूबड़ वाला कहलाता है और तीन बार बाँग देने से तीन बार नियम से आवाज़ लगाने वाला कहलाता है। इसलिए ऐसा मुर्ग़ा भेजो।"

उन्होंने भेज दिया।

○ ○ ○

शक्र द्वारा कुश नरेश को दी गई मणि आठ जगहों से टेढ़ी थी। उसका धागा पुराना पड़ गया था। कोई भी पुराने सूत को निकाल कर नया न पिरो सकता था। एक दिन राजाज्ञा आई, "इस मणि में से पुराना धागा निकालकर नया पिरोओ।"

ग्रामवासी न पुराना निकाल सके और न नया पिरो सके। असमर्थ होने पर पण्डित से बोले। उसका उत्तर था, "चिन्ता न करो।" उसने 'मधु बिन्दु लाओ' कहकर मधु की एक बूँद मँगवाई। फिर मणि के दोनों किनारों के छेदों पर थोड़ा-थोड़ा मधु लगा, कम्बल का धागा बट कर सिरे पर मधु लगा, थोड़ा-सा सिरा छेद में घुसा (उस मणि को) चीटियों के निकलने की जगह पर ले जाकर रखा। चींटियाँ मधु-गन्ध से खिचकर बाहर निकलीं और मणि का पुराना धागा खाती हुई इस पार से उस पार चली गईं। उन्होंने कम्बल के धागे का सिरा लिया और उसे खींचती हुई दूसरे सिरे से निकलीं। पण्डित ने जब जाना कि धागा पिरोया गया तो उसने मणि गाँववालों को दी कि राजा को दे दो। उन्होंने राजा के पास भेज दी।

राजा ने धागा डालने को सुना तो प्रसन्न हुआ।

o o o

राजा के मंगल-वृषभ को बहुत दिनों तक अच्छी तरह खिलाया-पिलाया गया। जब वह महोदर हो गया तो उसके सींग धोकर और उनमें तेल लगाकर, हल्दी से स्नान करा उसे प्राचीन यव मज्झक ग्रामवासियों के पास भेजा, "तुम लोग पण्डित हो।" राजा के इस मंगल-वृषभ को गर्भ ठहर गया है। इसको जनवाकर बछड़े सहित भेजो। न भेज सकने पर हज़ार का दण्ड।"

ग्रामवासियों ने पण्डित से पूछा, "यह तो हो नहीं सकता। क्या करें?"

उसने सोचा, यह केवल प्रत्युत्तर देने की बात होगी और लोगों से प्रश्न किया, "क्या आपको कोई ऐसा आदमी मिल सकता है जो चतुर हो और राजा के साथ बातचीत कर सके?"

"पण्डित! यह कठिन बात नहीं है।"

"तो उसे बुलवाओ।"

उन्होंने उसे बुलवाया। पण्डित ने कहा, "हे भले आदमी! यहाँ आ। अपने बालों को पीठ पर बिखेरकर, नाना प्रकार का विलाप करता हुआ राजद्वार पर जा। और कोई भी कुछ पूछे, बिना कुछ कहे रोते रहना। जब राजा बुलाकर विलाप का कारण पूछे तो कहना, 'देव! मेरा पिता जन नहीं सक रहा है, आज सातवाँ दिन है। मुझे अपनी शरण में लें। ऐसा बताएँ जिससे वह जन सके।' जब राजा कहे कि 'क्या बकवास कर रहा है, यह कहीं हो सकता है कि पुरुष जने!' तो कहना, देव! यदि आपका यह कहना सत्य है तो प्राचीन यव ग्रामवासी बैल को कैसे जनायेंगे?'"

उसने 'अच्छा' कह स्वीकार किया और जाकर वैसा ही किया। राजा ने पूछा, "यह प्रत्युत्तर किसने सोचा?" जब उसे पता लगा कि महोषध पण्डित ने, तो राजा प्रसन्न हुआ।

o o o

फिर एक दिन पण्डित की परीक्षा लेने के लिये आज्ञा भिजवाई गई, "प्राचीन यवमज्झक ग्रामवासी हमारे पास आम्ल-भात पकाकर भेजें, जिनमें न चावल हों, न पानी डाला जाय, न ऊखल में कूटे जायँ, न चूल्हे पर पकाए जायँ, न आग से पकाये जायँ, न लकड़ी से पकाये जायँ, न स्त्री द्वारा, न पुरुष द्वारा और न रास्ते से लाये जायँ। न भेजने पर हज़ार का दण्ड।"

ग्रामवासी इसे नहीं ही समझ सके। उन्होंने पण्डित से पूछा। उसने कहा, "चिन्ता न करो। 'चावल न हों' का मतलब हुआ कि चावल की कणियाँ लो, 'न पानी डाला जाय' का मतलब हुआ कि बर्फ़ लो, 'न ऊखल में कूटे जायँ' का मतलब हुआ कि दूसरा मिट्टी का बर्तन लो, 'न चूल्हे पर पकाये जायँ' का मतलब है ठूँठ खुदवाई जाय, 'न आग से पकाये जायँ' का मतलव है स्वाभाविक आग छोड़कर अरणी आग तैयार कराई जाय, 'न लकड़ी से पकाये जायँ' का मतलव है पत्ते मँगवाकर, आम्ल-भात पकवाकर, नये बर्तन में डाल, मुहर लगा, 'न स्त्री न पुरुष से' का मतलब है कि हिजड़े से उठवाकर, और 'न रास्ते से' का मतलब है कि महामार्ग छोड़कर पगडण्डी से राजा के पास भेजो।"

उन्होंने वैसा ही किया। राजा ने पूछा, "यह प्रश्न किसने जाना?" जब उसे पता लगा कि महोषध पण्डित ने तो राजा बहुत प्रसन्न हुआ।

o o o

फिर एक दिन पण्डित की परीक्षा लेने के लिए ग्रामवासियों के पास आज्ञा भिजवाई, "राजा डोले में झूलना चाहता है। राजकुल की पुरानी बालू की रस्सी सड़ गई है। बालू की एक रस्सी बटकर भेज दें। न भेज सकने पर हज़ार दण्ड।"

ग्रामवासियों ने पण्डित से ही पूछा। पण्डित ने सोचा, 'यह भी प्रति-प्रश्न पूछने की ही बात होनी चाहिये।' उसने ग्रामवासियों को आश्वस्त कर बातचीत करने में कुशल दो-तीन आदमियों को बुलाकर कहा, "जाओ, राजा से कहो, 'देव! गाँव के लोग नहीं जानते कि वह रस्सी कितनी पतली अथवा मोटी है। पुरानी बालू की रस्सी

से बालिश्त भर अथवा चार अंगुल-भर रस्सी का टुकड़ा भेज दें। उसे देख, उसी के अन्दाज से रस्सी बटेंगे।' यदि राजा कहे कि हमारे घर में बालू की रस्सी कभी नहीं हुई है, तो कहना कि 'महाराज! यदि वह नहीं बन सकती तो प्राचीन यव-ग्रामवासी कैसे बालू की रस्सी बटेंगे?' "

उन्होंने वैसा ही किया। राजा ने सुना तो पूछा, "यह प्रति-प्रश्न किसने सोचा?" जब पता लगा कि पण्डित ही ने तो राजा बहुत प्रसन्न हुआ।

० ० ०

फिर एक दिन ग्रामवासियों को आज्ञा हुई, "राजा जल-क्रीड़ा करना चाहता है। पाँच प्रकार के पद्मों से आच्छादित नयी पुष्करिणी भेजें। न भेजने से हजार का दण्ड।"

ग्रामवासियों ने पण्डित से पूछा। पण्डित ने समझ लिया कि यह भी प्रति-प्रश्न पूछने की ही बात होगी। उसने बातचीत करने में कुशल कुछ आदमियों को बुलवाकर कहा, "तुम जाओ और पानी में खेल, आँखें लाल कर, गीले केश, गीले वस्त्र तथा कीचड़ मला बदन कर लो। फिर हाथ में रस्सी, डण्डा और ढेले लेकर राजद्वार पर पहुँचो। वहाँ पहुँचने की सूचना राजा तक भिजवाओ। अनुज्ञा होने पर अन्दर जाकर कहना, 'महाराज! आपने प्राचीन यव मज्झक ग्रामवासियों को पुष्करिणी भेजने के लिए कहा। इसलिए हम आपके योग्य बड़ी-सी पुष्करिणी लेकर आये। किन्तु वह अरण्यवासिनी होने से, नगर देखने से, चार-दीवारी, खाई तथा अट्टालिकादि देखने से, डर के मारे रस्सी तुड़ाकर, भागकर अरण्य में ही चली गई। हम ढेलों तथा डण्डे आदि से मार कर उसे रोक नहीं सके। अपनी अरण्य से लाई हुई पुरानी पुष्करिणी दें। उस के साथ जोतकर उसे लायेंगे।' यदि राजा कहे कि न हमने कभी अरण्य से कोई पुष्करिणी मँगाई और न किसी पुष्करिणी को जोत कर लाने के लिए पुष्करिणी भेजी तो कहना, 'तब यवमज्झक ग्रामवासी कैसे पुष्करिणी भेजेंगे?' "

उन्होंने वैसा ही किया। राजा ने जब सुना कि यह बात भी पण्डित ने ही समझी तो वह बहुत प्रसन्न हुआ।

० ० ०

फिर एक दिन आज्ञा आई, "हमारी उद्यान-क्रीड़ा की इच्छा है। हमारा उद्यान पुराना है। यव मञ्झक ग्रामवासी सुपुष्पित वृक्षों से आच्छन्न नया उद्यान भेजें।"

पण्डित ने यह समझा कि यह भी प्रति-प्रश्न का ही विषय है, लोगों को आश्वस्त कर, आदमियों को भेज पहली तरह ही कहलाया।

तब राजा ने सन्तुष्ट हो सेनक से पूछा, "पण्डित को बुलवाएँ ?"

उसने अभी भी लाभ के प्रति ईर्ष्या के कारण कहा, "इतने से ही कोई पण्डित नहीं होता। और प्रतीक्षा करें।"

उसकी बात सुनी तो राजा सोचने लगा, 'महोषध पण्डित ने बाल-प्रश्नों से मेरा मन जीत लिया, और इस प्रकार की गूढ़ परीक्षाओं तथा प्रति-प्रश्नों में तो इसकी व्याख्या बुद्ध के समान है। सेनक ऐसे पण्डित को आने नहीं देता। मुझे सेनक पण्डित से क्या ? उसे लाता हूं।'

राजा बड़े ठाठ-बाट से गाँव की ओर चल दिया। जब वह मंगल-अश्व पर चढ़ा जा रहा था, घोड़े का पाँव फटी भूमि के अन्दर जाकर टूट गया। राजा वहीं से नगर की ओर वापिस लौट पड़ा। सेनक ने आकर पूछा, "महाराज ! पण्डित को लाने यवमञ्झक गाँव गये ?"

"पण्डित ! हाँ।"

"महाराज ! आप मुझे अपना अहितचिन्तक समझते हैं। 'अभी सब्र करें' कहने पर भी अति जल्दी करके गये। पहली बार ही मंगल घोड़े का पाँव टूट गया।"

उसकी बात सुनी तो राजा चुप हो रहा। फिर एक दिन उसने सेनक पण्डित से विचार किया, "सेनक ! क्या महोषध पण्डित को ले आएँ ?"

"तो देव ! स्वयं न जाकर दूत को भेजें। कहलाएँ, "हम तेरे पास आ रहे थे। हमारे घोड़े का पाँव टूट गया। चाहे खच्चर भेजो, चाहे

श्रेष्ठतर भेजो। यदि खच्चर भेजेगा, तो स्वयं आयेगा, यदि श्रेष्ठतर भेजेगा तो पिता को भेजेगा। यह भी हमारा एक प्रश्न ही हो जायेगा।"

राजा ने 'अच्छा' कह स्वीकार किया और वैसा कहकर दूत भेजा।

4

पण्डित ने दूत की बात सुनी तो सोचा, 'राजा मुझे और पिता को देखना चाहता है।'

वह पिता के पास गया और प्रणाम करके कहने लगा, "तात ! राजा आपको और मुझे देखना चाहता है। आप पहले हज़ार सेठों को साथ लेकर जाइये। जाते समय खाली हाथ न जा नये घी से भरा चन्दन-पात्र लेकर जायँ। राजा आपका कुशल-क्षेम पूछ कहेगा कि अपने योग्य आसन देख बैठ जाओ। आप वैसा आसन देख बैठ जाना। आपके बैठने के समय ही मैं आ जाऊँगा। राजा मेरा भी कुशल-क्षेम पूछ कहेगा, 'पण्डित ! अपने अनुरूप आसन देख बैठ।' तब मैं आपकी ओर देखूँगा। आप उस संकेत को समझ आसन से उठकर कहना, 'महोषध पण्डित ! इस आसन पर बैठ।'"

उसने 'अच्छा' कह स्वीकार किया और जैसे बताया तदनुसार ही जाकर राजा को सूचना भिजवाई कि वह द्वार पर खड़ा है। अन्दर आने की आज्ञा हुई तो अन्दर जाकर राजा को नमस्कार कर एक ओर बैठा। राजा ने उसका कुशल-क्षेम पूछ प्रश्न किया, "गृहपति ! तेरा पुत्र महोषध पण्डित कहाँ है ?"

"देव ! पीछे आ रहा है।"

राजा ने 'आ रहा है' सुना तो प्रसन्न हो बोला, "अपना उचित आसन जानकर बैठो।"

वह अपना उचित आसन जान एक ओर बैठा।

महोषध पण्डित ने सज-धजकर, हज़ार लड़कों को साथ ले, अलंकृत रथ में बैठ नगर में प्रवेश किया। जाते-जाते खाई

एक गधा देखा। उसने अपने शक्तिशाली साथियों को आज्ञा दी, "इस गधे का पीछा करो। पकड़ो। बिना बोलने दिये मुँह बाँधो और एक कपड़े में लपेट, कन्धे पर रख, लेकर आओ।" उन्होंने वैसा ही किया। महोषध पण्डित ने भी बड़े ठाठ-बाट से नगर में प्रवेश किया। जनता का मन महोषध पण्डित को देखने और उसकी प्रशंसा करने से न भरता था। लोग कहते, "यह है श्रीवर्धन सेठ का पुत्र महोषध पण्डित। पैदा होते समय यह हाथ में औषध लेकर पैदा हुआ। इसने परीक्षा के लिए पूछे गये कितने प्रश्नों के प्रति-प्रश्न जाने।"

राजद्वार पर पहुँच महोषध पण्डित ने अपने आगमन की सूचना भिजवाई। राजा सुनते ही बड़ा प्रसन्न हुआ। बोला, "मेरा पुत्र महोषध पण्डित शीघ्र आये।"

हज़ार लड़कों सहित वह महल पर चढ़ आया और राजा को प्रणाम करके एक ओर खड़ा हुआ। राजा उसे देखते ही प्रसन्न हुआ और बड़ी मिठास से कुशल-क्षेम पूछ बोला, "पण्डित! अपना योग्य आसन जान उस पर बैठ।"

उसने पिता की ओर देखा। पिता देखने के इशारे को समझ उठा और बोला, "पण्डित! इस आसन पर बैठ।" वह उस पर जा बैठा। उसे वहाँ बैठा देखते ही सेनक, पुक्कुस, काविन्द, देविन्द तथा दूसरे अन्धे मूर्खों ने ताली बजा, ज़ोर से हँसते हुए मज़ाक किया, "इसी अंधे मूर्ख को पण्डित कहते हैं! यह पिता को आसन से उठा कर स्वयं बैठता है। इसे पण्डित कहना अयोग्य है।"

महाराज का भी चेहरा उतर गया। महोषध पण्डित ने पूछा, "महाराज! क्या मन खराब हो गया है?"

"हाँ, पण्डित! मन खराब हो गया है। तेरे बारे में जो सुना था वही अच्छा था, दर्शन तो खराब रहा।"

"किस कारण से?"

"पिता को उठाकर आसन पर बैठने के कारण से।"

"महाराज! क्या आप सभी जगह पिता को पुत्र से श्रेष्ठ मानते हैं?"

"पण्डित ! हाँ।"

"महाराज ! क्या आपने हमारे पास आज्ञा नहीं भेजी थी कि खच्चर भेजो अथवा उससे श्रेष्ठतर ?" प्रश्न करते हुए उसने उठकर उन लड़कों की ओर देखा और कहा, "जो गधा तुमने पकड़ा है, उसे ले आओ।"

उसे मँगवाकर और राजा के चरणों में लिटवाकर पूछा. "महाराज ! इस गधे का क्या मूल्य है ?"

"यदि उपयोगी हो तो आठ कार्षापण।"

"इसके सम्बन्ध से श्रेष्ठ घोड़ी की कोख से पैदा हुए खच्चर की क्या कीमत होती है ?"

"पण्डित ! अमूल्य।"

"देव ! ऐसा क्यों कहते हैं ? क्या अभी आपने नहीं कहा कि सभी जगह पुत्र की अपेक्षा पिता ही श्रेष्ठतर होता है ? यदि यह सत्य है तो आपके मत के अनुसार खच्चर से गधा ही श्रेष्ठ है। क्या महाराज! आपके पण्डित इतनी बात भी न जान ताली बजाकर हँसते हैं। ओह ! आपके पण्डितों की प्रज्ञा ! ये कहाँ मिले हैं ?"

महोषध पण्डित बोला—

"हंसि तुवं एवं मञ्जेसि सेय्यो
पुत्तेन पिताति राजसेट्ठ,
हन्दस्सतरस्स ते अयं
अस्सतरस्स हि गद्रभो पिता॥"

[हे राजश्रेष्ठ ! यदि आपकी यह मान्यता है कि हर अवस्था में पिता से पुत्र ही श्रेष्ठ होता है तो खच्चर से यह गधा ही श्रेष्ठ है, क्योंकि खच्चर का पिता गधा ही है।]

इतना कह फिर निवेदन किया, "महाराज ! यदि पुत्र से पिता श्रेष्ठ है तो अपने हित-साधन के लिए पिता को ले लें और यदि पिता से पुत्र श्रेष्ठ है तो मुझे ले लें।"

राजा आनन्दित हुआ। सारी राज्य परिषद् ने साधुकार दिया.

"खूब समाधान किया है।" लोगों ने अंगुलियाँ चटखाईं और हजारों कपड़े उछाले। चारों पण्डितों के चेहरे उतर गए।

'बोधिसत्व' के समान माता-पिता के उपकारों का जानकार दूसरा नहीं है, तो भी उसने ऐसा क्यों किया! कुछ पिता का अपमान करने के लिए नहीं। राजा ने कहलाया था—खच्चर भेजो अथवा श्रेष्ठतर। महोषध पण्डित ने एक साथ राजा के प्रश्न का समाधान किया, अपना पाण्डित्य प्रकट किया और चारों पण्डितों को निष्प्रभ किया।

० ० ०

राजा ने प्रसन्न हो, सुगन्धित जल से भरी सोने की झारी ली और सेठ के हाथ पर पानी गिराते हुए कहा, "प्राचीन यवमज्झक ग्राम 'राजा द्वारा दिया गया' मानकर उसका उपभोग करें।"

फिर आज्ञा दी कि शेष सेठ इस सेठ के ही सेवक हों। फिर बोधिसत्व की माता के लिए सभी गहने भेजे। राजा गद्रभ-प्रश्न से इतना प्रभावित था कि बोधिसत्व को पुत्र बना लेने की इच्छा से उसने सेठ से कहा, "गृहपति! इस महोषध पण्डित को मुझे पुत्र बनाकर दे।"

"देव! यह अभी बच्चा है। अभी भी इसके मुँह से दूध की गन्ध आती है। बड़े होने पर आपके पास आ जाएगा।"

राजा ने उसे चले जाने के लिए प्रेरित किया। बोला, "गृहपति, अब से तू इसके प्रति अपना ममत्व छोड़ दे। आज से मेरा यह पुत्र हुआ। मैं अपने पुत्र का पोषण कर सकूँगा।"

पिता ने राजा को प्रणाम किया। महोषध पण्डित का आलिङ्गन किया। उसे छाती से लगा उसका सिर चूमा। फिर उपदेश दिया। महोषध पण्डित ने भी पिता को प्रणाम कर विदा किया और कहा, "तात! चिन्ता न करें।"

राजा ने पण्डित से पूछा, "तात! भात (महल) के अन्दर खाया करेगा अथवा बाहर?"

उसने सोचा, 'मेरे साथी बहुत हैं, मुझे भोजन बाहर ही करना चाहिये। उत्तर दिया, "मैं भोजन बाहर ही किया करूँगा।" राजा ने उसे योग्य घर दिलवा दिया, हज़ारों लड़कों के साथ उसके लिए

खर्च दिलवाया और अन्य सभी सामान भी। इसके बाद से महोषध पण्डित राजा की सेवा में रहने लगा। राजा उसकी परीक्षा लेने के लिये उत्सुक था ही।

उस समय नगर के दक्षिण-द्वार के समीप पुष्करिणी के किनारे एक ताड़ के पेड़ पर कौवे के घोंसले में मणि-रत्न था। राजा को सूचना मिली, "पुष्करिणी में मणि है।" उसने सेनक को बुलाकर पूछा, "पुष्करिणी में मणि दिखाई देती है। उसे कैसे निकलवाएँ?"

"पानी निकलवाकर निकालनी चाहिये।"

राजा ने उसे ही यह कार्य सौंपा। उसने बहुत से आदमी इकट्ठे कराये। पानी और कीचड़ निकलवाया, किन्तु ज़मीन उखड़वाने पर भी मणि नहीं दिखाई दी।

तब राजा ने पण्डित को बुलवाकर पूछा, "पुष्करिणी में एक मणि दिखाई देती है। सेनक ने पानी और कीचड़ निकलवाया तथा ज़मीन भी उखड़वाई। तो भी मणि नहीं दिखाई दी। पुष्करिणी के भरने पर फिर मणि दिखाई देती है। क्या तू मणि निकलवा सकेगा?"

"महाराज! यह कोई बड़ी बात नहीं है। आएँ, दिखाऊँगा।"

राजा प्रसन्न हुआ कि आज महोषध पण्डित का ज्ञान-बल देखूँगा। लोगों से घिरा हुआ वह पुष्करिणी के किनारे पर पहुँचा। महोषध पण्डित ने किनारे खड़े हो, देखते ही जान लिया कि यह मणि पुष्करिणी में नहीं होगी, यह मणि ताड़ के वृक्ष पर होगी। उसने कहा, "देव! पुष्करिणी में मणि नहीं है।"

"क्या पानी में दिखाई नहीं देती?"

उसने पानी की थाली मँगवाई और कहा, "देव! देखें न केवल पुष्करिणी में ही मणि दिखाई देती है, किन्तु इस पानी की थाली में भी दिखाई देती है।"

"पण्डित! तो मणि कहाँ होनी चाहिये?"

"देव! पुष्करिणी में भी छाया ही दिखाई देती है, मणि नहीं। मणि तो इस ताड़-वृक्ष पर कौवे के घोंसले में है। आदमी को पेड़ पर चढ़ाकर उतरवाएँ।"

राजा ने पेड़ पर से मणि मँगवा ली। पण्डित ने ले राजा के हाथ पर रखी। जनता ने 'साधु-साधु' कहा और सेनक का मज़ाक उड़ाते हुए महोषध पण्डित की प्रशंसा करने लगे, "मणि-रत्न को ताड़ के वृक्ष पर छोड़ सेनक ने बलवान पुरुषों से पुष्करिणी कुड़वाई। पण्डित हो तो महोषध पण्डित सदृश होना चाहिये।"

राजा ने भी उसे अपने गले की मोतियों की माला दी और हज़ार लड़कों को भी मोतियों की लड़ियाँ दिलवाईं। अनुयायियों सहित महोषध पण्डित के लिए बिना रोक-टोक सेवा में आने का नियम बन गया।

o o o

फिर एक दिन राजा महोषध पण्डित के साथ उद्यान गया। उस समय तोरण के सिरे पर एक गिरगिट रहता था। उसने राजा को सामने आते देखा तो उतरकर ज़मीन पर लेट रहा। राजा ने उसकी करनी देख पण्डित से पूछा, "पण्डित! यह गिरगिट क्या करता है?"

"महाराज! आपकी सेवा में है।"

"यदि ऐसा है तो मेरी सेवा निष्फल न हो। इसे जो चाहिए दिलवाओ।"

"देव! इसे अन्य वस्तुओं की अपेक्षा नहीं, इसके लिए भोजन ही पर्याप्त है।"

"यह क्या खाता है?"

"देव! माँस।"

"इसे कितना माँस मिलना चाहिए?"

"देव! कौड़ी के मूल्य-भर।"

राजा ने एक आदमी को आज्ञा दी, "राजा से जो मिले वह कौड़ी-भर के मूल्य का होना योग्य नहीं। इसे नियम से आधे मासे के मूल्य का माँस लाकर दिया जाय।"

उसने 'अच्छा' कहा और तब से वह वैसा ही करने लगा। एक दिन जब उसे माँस न मिला तो उसी आधे मासे को बींध धागा डाल, उसके गले में पहना दिया। इससे उसके मन में अभिमान पैदा हो गया।

इसी दिन राजा फिर उद्यान गया। उसने राजा को आते देखा धन के कारण उत्पन्न हुए अभिमान के वशीभूत हो वह तोरण नीचे नहीं उतरा। वहीं पड़ा-पड़ा सिर हिलाता रहा। वह राजा अपने धन की तुलना करता हुआ सोचने लगा, 'हे विदेह ! तेरे पास अधिक धन है, या मेरे पास ?'

राजा ने उसकी करतूत देख पूछा, "पण्डित ! और दिनों की तरह आज यह गिरगिट तोरण से नीचे क्यों नहीं उतरता ? क्या कारण है ?"

महोषध पण्डित ने उत्तर दिया—

"अलद्धपुब्बं लद्धान अड्ढमास ककण्टको,

अतियञ्जति राजानं वेदेहं मिथिलग्गहं ॥"

[आज तक कभी न मिला आधा मासा मिलने से गिरगिट मिथिलेश विदेह राजा की अवहेलना कर रहा है।]

राजा ने उस आदमी को बुलवाकर पूछा, उसने यथार्थ बात कह दी। 'विना किसी से पूछे महोषध पण्डित ने गिरगिट का भाव समझ लिया'—सोच राजा बहुत प्रसन्न हुआ। उसने पण्डित को चारों द्वारों पर मिलने वाला शुल्क (कर) दिलवाया।

राजा ने गिरगिट पर क्रोधित हो उसका भोजन बन्द कर देना चाहा। महोषध पण्डित ने उसे रोका कि यह अनुचित है।

5

मिथिला में पिंगुत्तर नाम का एक तरुण था। उसने तक्षशिला पहुँच, प्रसिद्ध आचार्य के पास जा शीघ्र ही विद्या सीख ली। शिल्प सीख चुकने पर उसने आचार्य को अपने यहाँ आने का निमन्त्रण दिया और जाने की आज्ञा माँगी।

उस आचार्य-कुल की यह परम्परा थी कि यदि आयु प्राप्त लड़की होती तो वह प्रधान शिष्य को दी जाती थी। आचार्य की एक लड़की

थी, सुन्दर देवाप्सराओं सदृश। उसने तरुण को कहा, "तात ! तुझे लड़की देता हूं। उसे लेकर जा।"

वह तरुण अभागा था, मनहूस। कुंआरी महापुण्यवान थी। उसने उसे देखा तो वह उसे अच्छी न लगी। अरुचिकर होते हुए भी उसने आचार्य की बात रखने के लिये उसे स्वीकार कर लिया। ब्राह्मण ने उसे लड़की दे दी।

o o o

रात के समय अलंकृत शयनागार में वह शैया पर लेटा था। वह शैया पर आई तो वह घबराकर शैया से उतर ज़मीन पर जा लेटा। वह भी उतरकर उसके पास गई। वह उठकर फिर शैया पर जा लेटा। वह भी शैया पर आई। वह फिर शैया से उतर आया। मनहूस का लक्ष्मी के साथ मेल नहीं ही बैठता। कुमारी शैया पर ही लेटी। वह मनहूस ज़मीन पर ही सोया। इस प्रकार एक सप्ताह बीता, आचार्य को प्रणाम कर, उसे साथ ले निकला। रास्ते में बात-चीत तक नहीं की। अरुचि से ही दोनों मिथिला आ पहुँचे।

नगर से थोड़ी दूर पर फलों से लदा गूलर का एक पेड़ था। पिंगुत्तर ने देखा तो उसे भूख लगी। उसने पेड़ पर चढ़ गूलर खाये। कुमारी को भी भूख लगी तो उसने भी पेड़ के नीचे जाकर कहा, "मेरे लिये भी फल गिरा।"

"क्या तेरे हाथ-पाँव नहीं हैं ? स्वयं चढ़कर खा।"

उसने पेड़ पर चढ़कर गूलर खाये। मनहूस तरुण ने उसे पेड़ पर चढ़ता जाना तो स्वयं शीघ्रता से नीचे उतरा और पेड़ को काँटों से घेर यह कहता हुआ भाग गया कि मुझे मनहूस से छुट्टी मिली।

वह उतर न सकने के कारण वहीं बैठी रही।

उद्यान-क्रीड़ा समाप्त कर शाम के समय जब राजा हाथी के कन्धे पर बैठा नगर में प्रवेश कर रहा था तो उसे वहाँ बैठे देख उस पर आसक्त हो गया। उसने पुछवाया, "उसका मालिक है अथवा नहीं ?"

उत्तर मिला, "कुल से प्रदत्त मेरा स्वामी है, किन्तु वह मुझे यहाँ बिठाकर छोड़कर भाग गया है।"

अमात्य ने जाकर यह बात राजा से कही। 'बिना मालिक की चीज़ राजा की होती है।' सोच राजा ने उसे उतरवाया, हाथी पर बिठाया और घर लाकर अभिषेक कर पटरानी बना लिया। वह उसकी प्रिया हुई, मन को अच्छी लगने वाली। उदुम्बर वृक्ष पर दिखाई पड़ने से उसका नाम उदुम्बरा देवी ही पड़ा।

एक दिन राजा के उद्यान जाने के लिये, द्वार-ग्रामवासी लोग रास्ता ठीक कर रहे थे। मज़दूरी करता हुआ पिंगुत्तर भी काछ बाँधे कुदाल से रास्ता काट रहा था। अभी रास्ता पूरा तैयार नहीं हुआ था कि तभी राजा उदुम्बरा देवी के साथ रथ में बैठ निकला। उदुम्बरा देवी ने भी उस मनहूस को रास्ता छीलते देखा तो उसे हँसी आ गई— 'यह मनहूस मेरे समान लक्ष्मी को सहन न कर सका।' राजा ने उसे हँसते हुए देखा तो क्रोधित हो पूछा, "क्यों हँसी?"

"देव! यह रास्ता छीलने वाला आदमी मेरा पहले का पति है। यही मुझे उदुम्बर पर चढ़ा, काँटों से घेरकर चला गया था। मैं इसे देख और यह सोच कि यह मुझ-जैसी लक्ष्मी को न रख सका, हँसी।"

राजा ने तलवार उठाई, "तू झूठ बोलती है। किसी और को देख हँसी होगी, तुझे मारूँगा।"

वह भयभीत हुई। बोली, "देव! अपने पण्डितों से पूछ लें।"

राजा ने सेनक से पूछा, "तू इसके कहने का विश्वास करता है?"

"देव! इस प्रकार की स्त्री को कौन छोड़कर जायेगा!" उसने उसकी बात सुनी तो और भी भयभीत हुई। तब राजा ने सोचा सेनक क्या जानता है, महोषध पण्डित से पूछूँ। उसने गाथा कही—

"इत्थो सिया रूपवती, सा च सीलवती सिया।
पुरिसो तं न इच्छेय्य, सद्दहासि महोषध॥"

[स्त्री सुन्दर भी हो और सदाचारिणी भी हो और तब भी आदमी उसकी इच्छा न करे, हे महोषध! क्या यह बात विश्वसनीय है?]

महोषध पण्डित का उत्तर था—

"सद्दहासि महाराज पुरिसो दुब्भगो सिया,
सिरीच काल कण्णीच न समेन्ति कदाचन ।"

[महाराज ! मैं इसमें विश्वास करता हूं कि आदमी अभागा हो सकता है । लक्ष्मी और मनहूस का कभी मेल नहीं बैठता ।]

राजा ने उसकी बात सुनी तो उदुम्बरा देवी के प्रति उसका क्रोध शान्त हो गया। उसने प्रसन्न हो एक लाख पण्डित की भेंट किये। कहा, "पण्डित ! यदि तू यहाँ न होता तो मूर्ख सेनक के कहने में आकर मैं इस प्रकार के स्त्री-रत्न को गँवा बैठता। अब तेरे ही कारण मुझे यह मिली है ।"

देवी ने भी राजा को नमस्कार कर कहा, "देव ! महोषध पण्डित के कारण ही मेरी जान बची है। मुझे वरदान दें कि मैं इसे अपना छोटा भाई बना सकूँ ।"

"अच्छा देवी ! मैं तुझे यह वर देता हूं। ले-ले ।"

"देव ! आज से मैं बिना अपने छोटे भाई को दिये कोई मिठाई नहीं खाऊँगी। मुझे वर दें कि आज से मैं समय-असमय कभी भी दरवाज़ा खुलवाकर इसे मिठाई भिजवा सकूँ ।"

"अच्छा भद्रे ! यह भी वरदान ले ।"

० ० ०

एक और दिन जलपान कर चुकने के बाद दूर तक टहलते हुए राजा ने एक मेढ़े और एक कुत्ते को मैत्रीपूर्वक रहते देखा। वह मेढ़ा हस्तिशाला में हाथियों के सामने डाली हुई अछूती घास खाता था। हथवानों ने उसे पीटकर निकाल दिया। जब वह चिल्लाता हुआ भागा जा रहा था, एक ने दौड़कर उसकी पीठ में एक डण्डा दे मारा। झुकी कमर लिये वेदना से पीड़ित हो वह जाकर राजभवन की बड़ी दीवार के सहारे पीठ के बल पड़ रहा।

उसी दिन राजा के रसोईघर में हड्डी-चर्म आदि खाकर बढ़े हुए कुत्ते ने जब रसोइया भात पकाकर बाहर खड़ा पसीना सुखा रहा था, मत्स्य-माँस की गन्ध न सह सकने के कारण रसोईघर में घुस,

ढक्कन गिरा, माँस खा लिया। बर्तन की आवाज़ सुनी तो रसोइये ने भी उसे बाहर भागा जान, पीछा करके, पीठ पर सीधा डण्डा दे मारा। वह भी पीठ झुका, एक पाँव उठा, जहाँ मेढ़ा था, वहीं जा रहा। मेढ़े ने पूछा, "मित्र ! तू पीठ झुकाये आ रहा है। क्या तुझे वायु रोग है ?"

कुत्ते ने भी पूछा, "तू भी पीठ झुकाये पड़ा है। क्या तेरे शरीर को भी वायु-कष्ट है ?"

दोनों ने अपना-अपना समाचार कहा। तब मेढ़े ने प्रश्न किया, "क्या फिर भी रसोईघर में जा सकेगा ?"

"नहीं जा सकूँगा। गया तो जान न बचेगी। क्या तू हस्तिशाला में जा सकेगा ?"

"मैं भी वहाँ नहीं जा सकता। गया तो मेरी भी जान नहीं बचेगी।"

वे सोचने लगे कि अब हम कैसे जीएँ ? मेढ़ा बोला, "यदि हम मिलकर रह सकें तो एक उपाय है।"

"तो बता ?"

"मित्र ! आज से तू हस्तिशाला जाया कर। हथवाह तुझ पर यह शंका न करेंगे कि यह घास खाता है। तू मेरे लिये घास ले आया कर। मैं भी रसोईघर में जाऊँगा। रसोइया मुझ पर भी यह शंका न करेगा कि माँस खाने वाला है। मैं तेरे लिये माँस लाऊँगा।"

उन दोनों ने यह स्वीकार किया कि यहाँ यह उपाय है। कुत्ता हस्तिशाला जाता और घास की मुट्ठी मुँह में ले आकर बड़ी दीवार के सहारे रख देता। दूसरा भी रसोईघर पहुँचता और मुँह-भर माँस का टुकड़ा लाकर रख देता। कुत्ता माँस खाता और मेढ़ा घास। इस उपाय से वे मिल-जुलकर प्रसन्नतापूर्वक बड़ी दीवार के सहारे रहने लगे। राजा ने उनका मित्र-धर्म देखा तो सोचने लगा, 'इससे पहले ऐसी बात नहीं देखी। अब देखता हूं कि ये शत्रु होकर भी मित्रता-पूर्वक रह रहे हैं। यही बात ले. प्रश्न बनाकर पण्डितों से पूछूँगा। जो

इस प्रश्न का उत्तर न दे सकेंगे उन्हें राज्य से निकाल दूँगा। जो उत्तर बता देगा उसका सत्कार करूँगा। आज तो असमय हो गया है। कल सेवा में आने पर पूछूँगा।"

o o o

अगले दिन जब पण्डित आकर उसकी सेवा में बैठे, उसने प्रश्न किया, "इस दुनिया में जो कभी मैत्रीपूर्वक कदम भी नहीं चले वे शत्रु आपस में मित्र हो गये। ये किस कारण से मिलकर रहते हैं? यदि आज जलपान के समय तक मेरे इस प्रश्न का उत्तर न दे सके तो सभी को भगाऊँगा। मुझे मूर्खों की अपेक्षा नहीं है।"

सबसे पहले आसन पर सेनक बैठा था और सबसे अन्त के आसन पर पण्डित। महोषध पण्डित ने इस प्रश्न पर विचार करते हुए सोचा, 'यह राजा स्वयं तो जड़-बुद्धि है। यह अपनी बुद्धि से सोच-कर तो यह प्रश्न नहीं पैदा कर सकता। इसने कुछ-न-कुछ देखा-सुना होगा। एक दिन का अवकाश मिले तो इस प्रश्न का समाधान करूँगा। क्या अच्छा हो यदि सेनक एक दिन का समय माँग ले।' शेष चारों जने भी अँधेरे घर में प्रविष्ट हुए सदृश ही थे। उन्हें कुछ नहीं दिखाई देता था। सेनक ने यह जानने के लिये कि पण्डित का क्या हाल है पण्डित की ओर देखा। उसने भी उसकी ओर देखा। सेनक देखने के ढंग से ही उसका भाव समझ गया कि पण्डित को भी नहीं सूझ रहा है इसलिये एक दिन का अवकाश चाहता है। उसने सोचा, इसका भी मनोरथ पूर्ण करूँगा। विश्वस्त ढंग से राजा के साथ ज़ोर की हँसी हँसते हुए बोला, "महाराज! प्रश्न का उत्तर न दे सकने पर क्या हम सभी को देश-निकाला दे देंगे? विचार करें, यह भी एक प्रश्न ही है। ऐसी बात नहीं कि हम इस प्रश्न का उत्तर न दे सकते हों। लेकिन यह ज़रा गूढ़ प्रश्न है। उसे हम जनता के बीच नहीं कह सकते। एकान्त में विचारकर पीछे आपको ही कहेंगे। हमें अवकाश दें।"

o o o

राजा उसकी बात सुन अप्रसन्न हुआ। तो भी उसने कहा, "अच्छा, सोचकर ही कहना।" किन्तु साथ ही धमकाया, "न कह सकने पर राज्य से निकाल दूँगा।" चारों पण्डित प्रासाद से निकले। सेनक ने सभी साथियों से कहा, "तात! राजा ने सूक्ष्म प्रश्न पूछा है। न कह सकने पर बड़ा खतरा है। तुम अपनी तबीयत से मेल खाने वाला भोजन खाकर अच्छी तरह विचार करना।" वे अपने-अपने घर गये।

महोषध पण्डित उठकर उदुम्बरा देवी के पास पहुँचा और पूछा, "देवी! आज या कल राजा अधिक देर तक कहाँ रहा?"

"तात! देर तक द्वार-खिड़कियों से देखता रहा।"

पण्डित ने सोचा, 'राजा ने इसी ओर से कुछ देखा होगा।' वहाँ जा, बाहर नज़र डालते हुए निश्चित रूप से समझ लिया कि मेढ़े और कुत्ते की करनी देखकर ही राजा के मन में यह प्रश्न पैदा हुआ होगा। यह निश्चय कर वह अपने निवास-स्थान पर गया। शेष तीन जने भी बिना कुछ देखे, चिन्ता करते हुए सेनक के पास पहुँचे। उसने उनसे पूछा, "प्रश्न का समाधान सूझा?"

"आचार्य! नहीं सूझा?"

"यदि ऐसा है तो राजा निकाल बाहर करेगा। क्या करोगे?"

"आपको सूझा?"

"नहीं, मुझे भी नहीं सूझा।"

"जब आपको भी नहीं सूझता तो हमें क्या सूझेगा? राजा के पास तो हम सिंहनाद कर आये कि सोचकर कहेंगे। उत्तर न दे सकने पर राजा क्रोध करेगा। क्या करें?"

"हमें इस प्रश्न का उत्तर नहीं सूझ सकता। महोषध पण्डित ने सौ-गुणा करके सोचा होगा। आओ, उसके पास चलें।"

चारों जने महोषध पण्डित के गृहद्वार पर पहुँचे। उन्होंने अपने आगमन की सूचना भिजवाई। अन्दर जा, कुशल समाचार पूछ, एक ओर खड़े होकर वे बोले, "पण्डित! क्या तूने प्रश्न का उत्तर सोचा?"

"मैं नहीं सोचूंगा तो और कौन सोचेगा ? हाँ, सोच लिया है।"

"तो हमें भी बता।"

बोधिसत्व ने सोचा, 'यदि मैं इन्हें नहीं बताऊँगा तो राजा इन्हें तो निकाल बाहर करेगा और मेरी सात रत्नों से पूजा करेगा। ये मूर्ख नष्ट न हों, इसलिये इन्हें भी बता देता हूं।' उसने चारों जनों को चार भिन्न-भिन्न उत्तर सिखा दिये।

राजा ने सेनक से पूछा, "सेनक ! तुझे प्रश्न का उत्तर सूझा ?"

"महाराज ! मुझे न सूझेगा तो और किसे ?"

"तो कहो।"

उसने जैसे महोषध पण्डित ने उसे गाथा रटाई थी, वैसे ही बिना समझे कह सुनाई—

"उग्गपुत्तराजपुत्तियानं, उरब्भमंसं पियं मनापं।
न ते सुन खस्स अदेन्ति मसं, अथ मेण्डस्स सुणेन सख्यमस्स ॥"

[अमात्य-पुत्रों तथा राजपुत्रों को भेड़ का माँस अच्छा लगना है। वे कुत्ते को माँस नहीं देते। इसीलिये मेढ़े और कुत्ते की दोस्ती हो गई।]

सेनक ने इसे स्वयं नहीं समझा, राजा को बात का पता होने से वह समझ गया और उसने मान लिया कि सेनक जानता है।

तब राजा ने दूसरे तीन पण्डितों का भी उत्तर जानना चाहा।

6

राजा ने पुक्कस से प्रश्न किया। पुक्कस बोला, "क्या मैं ही अपण्डित हूं ?" उसने भी जैसे महोषध पण्डित ने गाथा रटाई थी, वैसे ही कह सुनाई—

"चम्मं विहनन्ति एककस्स, अम्सपिट्ठत्थरण सुखस्स हेतु।
न ते सुनखस्स अत्थरन्ति, अथ मेण्डस्स सुणेन सख्यमस्स ॥"

[मेढ़े के चमड़े को घोड़े की पीठ पर सुखा सन के लिये बिछाते हैं। कुत्ते के लिये नहीं बिछाया जाता। इसीलिये मेढ़े और कुत्ते की मित्रता हो गई।]

पुक्कुस का भी अर्थ अज्ञात ही था। लेकिन राजा को बात मालूम होने से उसने समझा कि इसे भी मालूम है। तब उसने कोविन्द से प्रश्न किया। उसने भी बिना समझे गाथा कही—

"आवेल्लित सिङ्गिकोहि मेण्डो न सुनखस्स विसाणानि अत्थि,
तिणभक्खो मंस भोजनो च अथ मेण्डस्स सुणेन सख्यमस्स ॥"

[मेढ़े के सींग लिपटे हैं और कुत्ते के सींग नहीं होते। एक घासाहारी है और दूसरा माँसाहारी। इसीलिये मेढ़े और कुत्ते की मित्रता हो गई।]

राजा ने यह समझा कि उसने भी जान लिया। देविन्द से प्रश्न किया। उसे भी जैसे रटाई गई थी, वैसे ही गाथा कह सुनाई—

"तिणमासि पलासमासि नो पलासं, न सुनखो तिणमासि नो पलासं;
गण्हेय्य सुणो ससं विकारं, अथ मेण्डस्स सुणेन सख्यमस्स ॥"

[मेढ़ा घास खाता है, पत्ते खाता है। कुत्ता न घास खाता है, न पत्ते खाता है। कुत्ता खरगोश तथा बिल्ली को पकड़ता है। इसीलिए मेढ़े और कुत्ते की मित्रता हो गई।]

तब राजा ने पण्डित से पूछा, "तात ! तू यह प्रश्न जानता है ?"

"महाराज ! मेरे अतिरिक्त कौन इस प्रश्न को जानेगा ?"

"तो कहो।"

"महाराज, सुनें।"

महोषध पण्डित ने ये गाथाएँ कहीं—

"अड्ढ पादो चतुप्पदस्स, मेण्डो अट्ठनखो अदिस्स मानो,
छादियं आहरति अयं इयस्स, मंसं आहरति अयं अमुस्स।
पासाद गतो विदेहसेट्ठो वीतिहारं अञ्ञमञ्ज भोजनानं,
अद्दक्खि किर सक्खि तं जनिन्द, मोमुक्कस च पुण्णमुखस्स चेतं।"

[चार पाँवों तथा आठ अदृश्य नखों वाला मेढ़ा चतुष्पद (कुत्ते) के लिए माँस लाता है और वह उसके लिये घास लाता है। प्रासादा-

रूढ़ श्रेष्ठ विदेह नरेश ने परस्पर एक-दूसरे का भोजन लाना—कुत्ते का और मेढ़े—का देखा। हे जनिन्द्र! विदेह नरेश ने साक्षी होकर देखा।]

राजा को यह पता नहीं लगा कि सभी ने महोषध पण्डित से ही ज्ञान प्राप्त किया। यह कि पाँचों जनों ने अपनी-अपनी प्रज्ञा से ही बात का पता लगाया, वह प्रसन्न हुआ और बोला, "यह मेरे लिये बड़ा भारी लाभ है कि मेरे कुल में ऐसे धीर पण्डित हैं जो गम्भीर से गम्भीर विषय को भी जानकर सुभाषित करके कहते हैं।"

उसने सभी पण्डितों को एक-एक खच्चर, एक-एक रथ और एक-एक समृद्ध गाँव दिया।

o o o

उदुम्बरा देवी ने जब जाना कि दूसरों ने पण्डित से पूछकर ही प्रश्न का उत्तर दिया और राजा ने मूँग तथा माश की दाल में कुछ भी अन्तर न करने की तरह पाँचों का समान ही सत्कार किया तो वह सोचने लगी कि क्या मेरे छोटे भाई का विशेष सत्कार नहीं होना चाहिये? वह राजा के पास गई और पूछा, "देव! उस प्रश्न का उत्तर किसने दिया?"

"भद्रे! पाँचों पण्डितों ने।"

"देव! चारों जनों ने वह प्रश्न किससे पूछकर जाना?"

"भद्रे! नहीं जानता हूं।"

"महाराज! वे क्या जानते हैं! वे मूर्ख नष्ट न हों, इसलिये पण्डित ने ही उन्हें इस प्रश्न का उत्तर सिखाया। आपने सभी का समान आदर किया। यह अनुचित है। पण्डित का विशेष होना चाहिये।"

राजा को यह जान विशेष प्रसन्नता हुई कि पण्डित ने किसी पर यह बात प्रकट नहीं होने दी कि दूसरे पण्डितों ने उसी से जाना था। वह सोचने लगा, 'अच्छा! अपने पुत्र से एक प्रश्न पूछकर उत्तर देने पर बहुत सत्कार करूँगा।'

एक दिन जब पाँचों पण्डित सेवा में आकर सुखपूर्वक बैठे थे तो राजा बोला, "सेनक ! प्रश्न पूछता हूं ?"

"देव ! पूछें ?"

"एक आदमी प्रज्ञावान हो किन्तु लक्ष्मीपति न हो, दूसरा यशस्वी हो किन्तु प्रज्ञारहित हो। हे सेनक ! मैं तुमसे पूछता हूं कि कुशल लोग किसे अधिक अच्छा कहते हैं ?"

"राजन् ! धैर्यवान, मूर्ख शिल्प के जानकार, शिल्प के अजानकार, सभी श्रेष्ठ जाति वाले भी (हीन) जन्मा धनी आदमी के नौकर हो जाते हैं। यह बात देखकर ही मैं कहता हूं कि प्रज्ञावान तुच्छ है, श्रीमान् ही श्रेष्ठ हैं।"

राजा ने उसकी बात सुनी तो शेष तीनों को न पूछ महोषध पण्डित से ही प्रश्न किया, "हे बहुप्रज्ञ ! हे केवल धर्मदर्शी महोषध पण्डित ! मैं तुझे भी पूछता हूं कि मूर्ख श्रीमान् और अल्प-धनी पण्डित में से चतुर लोग किसे श्रेष्ठ समझते हैं ?"

पण्डित का उत्तर था, "इसी लोक में जो कुछ है, श्रेयस्कर है, समझने वाला मूर्ख पाप-कर्म करता है। इस लोक को ही देखनेवाला, परलोक को न देखनेवाला मूर्ख दोनों जगह पाप का भागी होता है। यह बात देखकर मैं कहता हूं कि यशस्वी मूर्ख की अपेक्षा प्रज्ञावान ही श्रेष्ठ है।"

यह उत्तर सुना तो राजा ने सेनक को सम्बोधित किया, "पण्डित तो कहता है कि प्रज्ञावान ही श्रेष्ठ होता है।"

"महाराज ! महोषध बच्चा है। अभी भी उसके मुँह से दूध की गन्ध आती है। यह क्या जानता है ?"

"तब ?"

"सुनें।"

उसने यह गाथा कही—

"न सिप्पमेतं विददाति भोगं, न बन्धवा न सरीरावकासो,
पस्सेकमूगं सुखमेधमानं सिरीहीनं भजते गोरिमन्दं,
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि, पञ्जो निहीनो सिरिमाव सेय्यो ॥"

[न तो विद्या से ही धन प्राप्त होता है, न बन्धुओं से और न शरीर-प्रभा से। इस महामूर्ख गोरिमन्द सेठ को सुख भोगते हुए देखो। लक्ष्मी इसी के पास वास करती है। यह बात देखकर भी मैं कहता हूं कि प्रज्ञावान की अपेक्षा लक्ष्मीपति ही श्रेष्ठ है।]

राजा बोला, "महोषध पण्डित ! यह क्या कह रहा है ?"

"देव ! सेनक क्या जानता है ? जैसे भात पकाने की जगह कौआ अथवा दही पीने के लिये तैयार कुत्ता हो, वैसे ही यह केवल धन ही देखता है। इसे सिर पर पड़ने वाला महा मुग्दर नहीं दिखाई देता।" उसने यह गाथा कही—

"लद्धा सुखं मज्जति अप्प पञ्ञो, दुक्खेन फुट्ठोपि पमोहमेति,
आगन्तुना सुखदुक्खेन फुट्ठो पवेधति वारिचरोव घम्मे;
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि, पञ्ञोव सेय्यो न यसस्सि बालो ॥"

[मूर्ख आदमी थोड़ा सुख मिलने पर प्रमाद करता है और दुख का स्पर्श होने पर भी मूढ़ हो जाता है। आ पड़ने वाले सुख-दुख का स्पर्श होने से वैसे ही तड़पता है जैसे धूप में पड़ी हुई मछली। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि यशस्वी मूर्ख की अपेक्षा प्रज्ञावान ही श्रेष्ठ है।]

राजा बोला, "आचार्य ! यह कैसी बात है ?"

"देव ! यह क्या जानता है ! मनुष्यों की बात रहने दें। जंगल के पेड़ भी फलों से लदे हों तभी पक्षी उनके पास जाते हैं।"

उसने यह गाथा कही—

"दुमं यथा सादुफलं अरञ्ञे समन्ततो समभिचरन्ति पक्खी,
एवम्पि अड्ढं सधनं सभोगं बहुज्जनो भजति अत्थहेतु,
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि, पञ्ञे निहीनो सिरिमाव सेय्यो ॥"

[जिस प्रकार जंगल में स्वादिष्ट फलों वाले पेड़ को पक्षी चारों ओर से घेर लेते हैं, उसी प्रकार धनवान, सम्पत्तिशाली आदमी को अर्थ की इच्छा से बहुत लोग घेरे रहते हैं यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि प्रज्ञावान की अपेक्षा लक्ष्मीपति ही श्रेष्ठ है।]

राजा बोला, "तात ! यह कैसी बात है ?"

"यह महोदर क्या जानता है ? देव ! सुनें—

"न साधु बलवा बालो साहसं विन्दते धनं
कन्दन्तमेव दुम्मेधं कड्ढन्ति निरये भुसं
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि
पञ्जोव सेय्यो न यसस्सि बालो ।।"

[मूर्ख बलवान अच्छा नहीं। वह जोर-जबर्दस्ती करके दूसरों के धन का उपयोग करता है। उस मूर्ख को भी नरक में रोते पीटते हुए ही खींचकर ले जाते हैं। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि यशस्वी मूर्ख की अपेक्षा प्रज्ञावान ही श्रेष्ठ है।]

o o o

सेनक का उत्तर था—

"या काचि नज्जो गङ्गमभिस्सवन्ति सब्बाव ता नामगोत्तं जहन्ति,
गङ्गा समुद्दं पतिपज्जमाना न खायते इद्धिपरो हि लोको;
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि पञ्जो निहीनो सिरिमाव सेय्यो ।।"

[जितनी भी नदियाँ समुद्र में जाकर मिलती हैं, वे सभी अपना नाम-गोत्र छोड़ देती हैं। फिर गंगा भी समुद्र में जाकर विलीन हो जाती है। दुनिया ऋद्धिमान् की ही ओर झुकती है। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि प्रज्ञावान् की अपेक्षा लक्ष्मीपति ही श्रेष्ठ है।]

पण्डित का उत्तर था—

"यमेत मक्खा उदीधं महन्तं सवन्ति नज्जो सब्बकालं असङ्खं,
सो सागरो निच्च मुकारवेगो वेलं न अच्चेति महासमुद्दो ।।
एवम्पि बालस्स पजप्पितानि पञ्ञं न अच्चेति सिरी कदाचि,
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि पञ्जोव सेय्यो न यसस्सि बालो ।।

[यह जो महान् समुद्र की बात कही कि उसमें सभी नदियाँ नाम-रूप खोकर मिल जाती हैं। तो वेगवान् महासमुद्र कभी भी अपनी सीमा का उल्लंघन नहीं करता। इसी प्रकार मूर्ख का बकवास है।

लक्ष्मी कभी भी प्रज्ञा से नहीं बढ़ सकती। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि यशस्वी मूर्ख की अपेक्षा प्रज्ञावान ही श्रेष्ठ है।]

सेनक का कहना था—

"असञ्जतो चेपि परेसमत्थं भणाति सन्थानगतो यस्ससी,
तस्सेव तं रूहति जातिमज्झे सिरिहीनं कारयते न पञ्जा,
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि पञ्जो निहीनो सिरिमाव सेय्यो ॥"

[न्यायाधीश के पद पर बैठा हुआ दुराचारी श्रीमान् यदि स्वामी को अस्वामी और अस्वामी को स्वामी भी बना देता है तो जाति वालों में उसका वह निर्णय ही पक्का हो जाता है। यह कार्य लक्ष्मी ही कराती है, प्रज्ञा नहीं। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि प्रज्ञावान की अपेक्षा लक्ष्मीपति ही श्रेष्ठ है।]

पण्डित का उत्तर था—

"परस्सवा अत्तनोवादि हेतु बालो मुसा भासति अप्पपञ्जो,
सो निन्दितो होति सभाय मज्झे पेच्चम्पि सो दुग्गतिदामि होति;
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि पञ्जोव सेय्यो न यसस्सि बालो ॥"

[दूसरे के लिए या अपने ही लिये यदि अल्प-प्रज्ञ मूर्ख झूठ बोलता है तो वह सभा में निन्दित ही होता है और परलोक में भी दुर्गति को प्राप्त होता है। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि यशस्वी मूर्ख की अपेक्षा प्रज्ञावान ही श्रेष्ठ है।]

सेनक का कहना था—

"अत्थम्पि चे भासति भूरिपञ्जो अनाकिहयो अप्पधनो दलिद्दो,
न तस्स तं रूहति जातिमज्झे सिरी च पञ्जागवतो न होति,
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि पञ्जो निहीनो सिरिमाव सेय्यो ॥"

[यदि अल्प-धनी, अलक्ष्मी-पति; दरिद्र किन्तु प्रज्ञावान व्यक्ति यथार्थ बात भी बोलता है तो भी उसकी बात जाति वालों में प्रामाणिक नहीं ठहरती। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि प्रज्ञावान की अपेक्षा लक्ष्मी-पति ही श्रेष्ठ है।]

पण्डित का उत्तर था—

"परस्स वा अत्तनो चापि हेतु न भासति अलीकं भूरिपञ्जो,
सो पूजितो होति सभाय मज्झे पेच्चञ्च सो सुग्गतिगामी होति,
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि पञ्जोव सेय्यो न यस्ससि बालो ॥"

[दूसरे के लिये अथवा अपने लिये ही प्रज्ञावान आदमी झूठ नहीं बोलता, वह सभा के बीच पूजित होता है और परलोक में भी वह सुगति को प्राप्त होता है। यह बात देखकर भी मैं कहता हूं कि यशस्वी मूर्ख की अपेक्षा प्रज्ञावान ही श्रेष्ठ है।]

सेनक का कहना था—

"हत्थी गवस्सा मणिकुण्डला च नरियो च इद्धेसु कुलेसु जाता,
सब्बाव ता उपभोगा भवन्ति इद्धस्स पोसस्स अनिद्धिमन्तो
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि पञ्जो निहीनो सिरिमाव सेय्यो ॥"

[हाथी, गाएँ, घोड़े, मणि, कुण्डल तथा नारियाँ—ये सभी धनी कुल में होती हैं। सभी ऐश्वर्यहीन प्राणी ऐश्वर्यवान की योग्य वस्तु बनते हैं। यह भी देखकर मैं कहता हूं कि प्रज्ञावान की अपेक्षा लक्ष्मीपति ही श्रेष्ठ है।]

पण्डित का उत्तर था—

"असंविहितकम्पन्तं बालं दुम्मन्तयन्तिनं
सिरी जहति दुम्मेधं जिग्गंव उरगोतचं
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि
पञ्जोव सेय्यो न यसस्सि बालो ॥"

[जिसका कर्मान्त व्यवस्थित नहीं, जिसके सलाहकार मूर्ख हैं, जो स्वयं मूर्ख है उसे लक्ष्मी उसी प्रकार छोड़कर चली जाती है जैसे सर्प अपनी पुरानी केंचुल को। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि यशस्वी मूर्ख की अपेक्षा प्रज्ञावान ही श्रेष्ठ है।]

सेनक ने अपनी समझ में पण्डित को अप्रतिभ करने वाली बात कही—

"पञ्च पण्डिता मय भदन्ते सब्बे पञ्जलिका उपट्ठिता
त्व नो अभिभूप्य इस्सरोसि सक्को भूतपतीव देवराजा,
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि पञ्जो निहोनी सिरिमाव सेय्यो ॥"

[हम पाँचों पण्डित भदन्त के सामने हाथ जोड़कर खड़े हैं। तुम हम सबके ऊपर हमारा 'ईश्वर' है; जैसे भूत-पति देवेन्द्र शक्र। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि प्रज्ञावान की अपेक्षा लक्ष्मीपति ही श्रेष्ठ है।]

पण्डित ने भी वैसा ही मुँहतोड़ उत्तर दिया—

"दासोव पञ्जस्स यसस्सि बालो अत्थेसु जातेसु तथाविधेसु
यं पण्डितो निपुणं संविधेति सम्मोहमापज्जति तत्थ बालो;
एतम्पि दिस्वान अहं वदामि पञ्जोव सेय्यो न यसस्सि बालो ॥"

[वैसा अवसर आने पर यशस्वी मूर्ख प्रज्ञावान का दास होता है। जिस बात को पण्डित ठीक से समझ लेता है, उस विषय में मूर्ख मूढ़ता को प्राप्त हो जाता है। यह बात भी देखकर मैं कहता हूं कि यशस्वी मूर्ख की अपेक्षा प्रज्ञावान ही श्रेष्ठ है।]

जब सेनक और कुछ भी न कह सका तब महोषध पण्डित ने ही कहा—

"अद्धाहि पञ्जाव सतं पसत्था कन्दा सिरी भोगरता यनुस्सा,
त्राणञ्च बुद्धान मतुल्यरूपं पञ्चन अच्चेनि सिरी कदाचि ॥"

[निश्चय से सत्पुरुषों ने प्रज्ञा की ही प्रशंसा की है। भोगों में रत मनुष्य को ही लक्ष्मी प्रिय है। ज्ञान-वृद्धों का ज्ञान ही अतुलनीय है। लक्ष्मी कभी प्रज्ञा से पार नहीं पा सकती।]

राजा ने यह सब सुना तो गद्‌गद् हो उठा और बोला, "हे महोषध! जो-जो कुछ पूछा वह सब तू ने बताया। तू ही केवल धर्मदर्शी है। मैं तेरे प्रश्नों के समाधान से सन्तुष्ट होकर हज़ार गौएँ, बैल, हाथी, श्रेष्ठ घोड़े जुते दस रथ और सोलह गाँव देता हूं।"

7

इसके बाद से महोषध पण्डित का ऐश्वर्य बहुत बढ़ गया। उसकी सब बातों की चिन्ता उदुम्बरा देवी ही करती थी। सोलह वर्ष की आयु होने पर वह सोचने लगी, 'मेरा छोटा भाई अब छोटा न रहा। इसका ऐश्वर्य भो बहुत बढ़ गया। इसका विवाह करना योग्य है।'

उसने यह बात राजा से कही। राजा ने यह बात सुनी तो प्रसन्न हुआ और बोला, "अच्छा! तू उसे जना दे।"

उसने जानकारी कराई। जब उसने स्वीकार किया तो पूछा, "तो तात! कुमारी ले आएँ!"

'शायद इनकी लाई हुई मेरे मन को न भाये, मैं स्वयं ही खोजूँगा।' सोच महोषध पण्डित ने उत्तर दिया, "देवी! कुछ दिन राजा को कुछ नहीं कहना। मैं लड़की स्वयं खोजकर अपनी रुचि की बात तुम्हें बता दूँगा।"

"तात! ऐसा ही कर।"

उसने देवी को नमस्कार किया। अपने घर पहुँचा। मित्रों को सूचना दी। वेश बदला और फिर धुनिये का सामान ले, अकेला ही उत्तर द्वार से निकल, उत्तर-यव-मज्झक गाँव गया।

उस समय वहाँ का पुराना सेठ-कुल दरिद्र हो गया। उस कुल की अमरा देवी नाम की कन्या सुन्दरी थी, सभी लक्षणों से युक्त थी और पुण्यवती थी। वह उस दिन प्रातःकाल ही पतली खिचड़ी पका, पिता के खेत पर ले जाने की इच्छा से घर से निकली। महोषध पण्डित ने उसे आते देख सोचा, 'यह स्त्री लक्षणों से युक्त है। यदि अविवाहिता हो तो मेरी चरण-सेविका होने के योग्य है।"

उसने भी उसे देखते ही सोचा, 'यदि ऐसे पुरुष के घर में होऊँ तो मैं कुटुम्ब को पाल सकती हूं।'

महोषध पण्डित ने सोचा, 'मैं नहीं जानता कि यह विवाहिता है अथवा अविवाहिता? हस्त-मुद्रा से मैं प्रश्न करता हूं। यदि पण्डिता होगी तो समझ जायगी।' उसने दूर ही खड़े रह मुट्ठी बाँधी। उसने

यह समझ कि यह मेरे विवाहिता होने अथवा न होने की बात पूछता है, हाथ खोल दिया। वह समझ गया और समीप जाकर पूछा, "भद्रे ! तेरा क्या नाम है ?"

"स्वामी ! मेरा नाम वह है जो भूत, भविष्यत् अथवा वर्त्तमान में नहीं है।"

"भद्रे ! लोक में 'अमर' कोई नहीं है। तेरा नाम 'अमरा' होगा।"

"स्वामी ! हाँ।"

"भद्रे ! खिचड़ी किसके लिये ले जा रही है ?"

"स्वामी ! पूर्व देवता के लिये।"

"भद्रे ! माता-पिता ही पूर्व देवता हैं। मालूम होता है तू पिता के लिये ले जा रही है।"

"स्वामी, ऐसा ही है।"

"तेरा पिता क्या करता है ?"

"एक के दो करता है।"

"एक के दो करने का मतलब होता है हल चलाना। मालूम होता है खेती करता है।"

"स्वामी ! हाँ।"

"तेरा पिता किस जगह हल चलाता है ?"

"जहाँ एक बार जाकर नहीं लौटते।"

"एक बार जाकर नहीं लौटने की जगह श्मशान है। भद्रे ! लगता है श्मशान के पास हल चलाता है ?"

"स्वामी ! हाँ।"

"भद्रे ! क्या आज ही आयेगी ?"

"यदि आयेगा तो नहीं आऊँगी, नहीं आयेगा तो आऊँगी।"

"भद्रे ! मालूम होता है तेरा पिता नदी के तीर पर हल चलाता है। पानी के आने पर नहीं आयेगी, आने पर आयेगी।"

"स्वामी ! हाँ।"

इतनी बातचीत करके देवी ने पूछा, "स्वामी ! यवागू पिएँगे ?"

महोषध पण्डित ने सोचा, 'निषेध करना अमंगल होगा।' बोला, "पिऊँगा।"

उसने यवागू का घड़ा उतारा। महोषध पण्डित ने सोचा, 'यदि बिना हाथ धोये और बिना हाथ धोने के लिये पानी दिये यवागू देगी तो इसे यहीं छोड़ चला जाऊँगा।' उसने थाली में पानी लिया और उसे हाथ धोने को जल दे खाली थाली हाथ में न दे, ज़मीन पर रख, घड़े को हिलाकर उसे यवागू से भर दिया।

उसमें चावल कम घुले थे। महोषध पण्डित ने कहा, "भद्रे! खिचड़ी बहुत गाढ़ी है।"

"स्वामी, पानी नहीं मिला।"

"मालूम होता है खेतों को भी पानी नहीं मिला होगा?"

"स्वामी! हाँ।"

उसने पिता के लिये यवागू रख महोषध पण्डित को दिया। उसने पिया, मुँह धोया और बोला, "भद्रे! मैं तुम्हारे घर जाऊँगा। मुझे मार्ग बता।"

उसने 'अच्छा' कह माग बताते हुए एक निपात की यह गाथा कही—

"येन सत्तुविकङ्गा च द्विगुण पलासो च पुप्फितो,
येनादामि तेन वदामि येन नादामि न तेन वदामि,
एस मग्गो यवमञ्झकस्स एतं छन्नपथं विजानहि॥"

[जहाँ सत्तू और कांजी (की दुकान) है और जहाँ पलास दुगुना पुष्पित है, उससे दक्षिण (बाईं ओर नहीं) और यही मञ्झक का रास्ता है। इस ढके हुए रास्ते को पहचान।]

o o o

वह उसके बताये रास्ते से ही घर पहुँचा। वहाँ अमरा देवी की माँ ने देखते ही आसन दिया और पूछा, "स्वामी! यवागु तैयार करुँ?"

"माँ! मेरी छोटी बहन अमरा देवी ने मुझे यवागु दिया है।"

वह समझ गई कि मेरी लड़की के लिये आया होगा। महोषध पण्डित ने यह जानते हुए भी कि यह दरिद्र हैं, पूछा, "माँ ! मैं दर्जी हूं। कुछ सीने को है ?"

"स्वामी, है। किन्तु मूल्य नहीं है।"

"माँ ! मूल्य की अपेक्षा नहीं है। ला, सिऊँगा।"

उसने पुराने वस्त्र लाकर दिये। जो-जो वस्त्र वह लाती, महोषध पण्डित उन्हें समाप्त करते जाते। पुण्यवानों की करनी सफल होती है। उसने कहा "माँ ! गली में बराबर वालों को सूचना दे दो।"

उसने सारे गाँव में सूचना दे दी। महोषध पण्डित ने सिलाई का काम कर एक ही दिन में हज़ार पैदा कर लिये। बुढ़िया ने भी उसे प्रातःकाल का भात दिया। फिर पूछा, "तात ! शाम को कितना पकाऊँ ?"

"माँ ! जितने इस घर में खाने वाले हैं, उनके प्रमाण से।"

बुढ़िया ने अनेक प्रकार के सूप-व्यञ्जन तथा बहुत-सा भात पकाया। अमरा देवी भी शाम को लकड़ियों का ढेर और गोद में पत्ते लिये जंगल से लौटी। उसने दरवाजे के सामने लकड़ियाँ फेंकीं और पिछले द्वार से घर में प्रवेश किया। पिता और भी सन्ध्या होने पर घर लौटा। महोषध पण्डित ने नाना-प्रकार के श्रेष्ठ रसों से युक्त भोजन किया। अमरा देवी ने माता-पिता के खा चुकने पर स्वयं खाया और फिर माता-पिता के पाँव धोने के बाद महोषध पण्डित के पाँव धोये। वह उसकी जाँच करते हुए कुछ दिन वहीं रहा।

उसकी परीक्षा लेने के लिये महोषध पण्डित ने एक दिन कहा, "भद्रे ! आधी नाभी भर धान लेकर, उससे मुझे खिचड़ी, पूए और भात पकाकर दे।"

उसने 'अच्छा' कह स्वीकार किया और वे धान कूट पूरे चावलो से यवागु, बीच के चावलों से भात और कणियों से पूए पकाकर, उनके अनुरूप व्यञ्जन तैयार कर महोषध पण्डित को व्यञ्जन

सहित यवागु दिया। मुँह में रखते ही सारे मुँह को स्वाद का पता लग गया। उसने उसकी परीक्षा लेने के लिये ही, 'भद्रे ! यदि पकाना नहीं जानती तो मेरे धान क्यों बिगाड़े ?' कह थूक के साथ यवागु भी जमीन पर गिरा दिया। उसने बिना क्रोधित हुए, 'स्वामी ! यदि यवागु ठीक नहीं बना तो पूए खायें,' कह पूए दिये। उसने उनके साथ भी वैसा ही किया। भात के साथ भी वैसा ही बर्ताव कर क्रुद्ध की भाँति कहा, "यदि तू पकाना नहीं जानती तो मेरे तण्डुल क्यों बिगाड़े ? अब तीनों को एक साथ मिला, सिर से लेकर सारे शरीर पर पोत और दरवाज़े पर बैठ।"

उसने बिना क्रुद्ध हुए, 'स्वामी ! अच्छा' कहा और वैसा ही किया। उसकी विनम्रता का परिचय पा कहा, "भद्रे ! आ।" वह एक बार कहने से ही चली आई।

महोषध पण्डित आते समय पान की थैली में एक वस्त्र के साथ हज़ार रख लाये थे। उन्होंने वह वस्त्र निकाल, उसके हाथ में रख कहा, "भद्रे ! अपनी सहेलियों के साथ स्नान कर, यह वस्त्र पहन कर आ।" उसने वैसा ही किया।

पण्डित ने कुछ कमाया था और जो कुछ लाया था वह सारा धन उसके माता-पिता को दिया। उन्हें निश्चिन्त कर, उसे साथ ले वह नगर पहुँचा। वहाँ उसकी परीक्षा लेने के लिये उसने उसे द्वारपाल के घर बिठाया। फिर द्वारपाल की भार्या को कह अपने निवास-स्थान पर गया। वहाँ पहुँचकर उसने आदमियों को बुला हज़ार देकर भेजा, "मैं अमुक घर में स्त्री को रखकर आया हूं। यह हज़ार ले जाकर उसकी परीक्षा करो।" उन्होंने वैसा ही किया। उसने अस्वीकार कर दिये। बोली, "ये मेरे स्वामी के पाँव की धूलि के भी समान नहीं हैं।"

उन्होंने जाकर पण्डित से कहा। उसके बाद भी उसने तीन बार आदमी भेजे। चौथी बार कहा, "तो उसे हाथ से पकड़ खींचकर लाओ।" उन्होंने वैसा हो किया। बड़े ऐश्वर्य के बीच बैठे होने के

कारण उसने महोषध पण्डित को नहीं पहचाना। उसे देख वह हँसी और रोई। उसने दोनों बातों का कारण पूछा। वह बोली, "स्वामी! मैंने तुम्हारी सम्पत्ति देख सोचा कि यह सम्पत्ति यूं ही नहीं मिली होगी। पूर्व-जन्म में किये गए कुशलकर्म के फलस्वरूप मिली होगी। ओह! पुण्यों का फल! यही सोचकर हँसी। और रोई इसलिये कि अब यह पराई वस्तु पर हाथ साफ करने जा रहा है, इसलिये नरक जायगा। तेरे प्रति करुणा होने से रोई।"

उसने उसकी परीक्षा कर उसकी शुद्धता जान ली और लोगों को कहा, "जाओ, इसे वहीं ले जाओ।" फिर दूसरे दिन धुनिये का ही वेश बना, जाकर उसके साथ रात बिताई। अगले दिन प्रातःकाल ही राजकुल में प्रविष्ट हो उदुम्बरा देवी को सूचना दी।

उदुम्बरा देवी ने राजा को कह, अमरा देवी को सब अलंकारों से अलंकृत कर, बड़े भारी रथ में बिठा, बड़े ठाठ-बाट से महोषध पण्डित के घर मँगवा मंगल-कार्य किया।

राजा ने महोषध पण्डित के लिये हज़ार की भेंट भेजी। द्वारपालों से लेकर सभी नागरिकों ने भेंट भेजी। अमरा देवी ने राजा की भेजी हुई भेंट को दो हिस्से कर एक हिस्सा राजा को भेजा। इसी तरह सारे नगरवासियों को भेंट भेज उसने नागरिकों का दिल जीत लिया। इसके बाद से महोषध पण्डित उसके साथ एक होकर रहते हुए राजा के अर्थ और धर्म के अनुशासक बने रहे।

एक दिन जब शेष तीन जने उसके पास आये हुए थे, सेनक ने कहा, "भो! हम तो उस गृहपति-पुत्र महोषध से ही पार नहीं पा सकते। अब वह अपनी अपेक्षा भी चतुर एक भार्या ले आया है। क्या कहकर उसके और राजा के बीच में भेद पैदा करें?"

"आचार्य! हम क्या जानें? आप ही जानते हैं।"

"अच्छा चिन्ता न करो। उपाय है। मैं राजा की चूड़ामणि चुरा ले जाऊँगा। पुक्कुस! तू स्वर्णमाला ले आना। काविन्द! तू कम्बल ले आना और देविन्द! तू स्वर्ण-पादुका ले आना।"

वे चारों जने ढंग से वे चीज़ें ले आये। तब बिना पता लगने दिये ये चीज़ें महोषध पण्डित के घर भेजने का निश्चय किया। सेनक ने मणि को तक्र के घड़े में डाल दासी के हाथ भेजा और उसे कहा, "यदि और कोई यह तक्र का घड़ा ले तो उसे न देकर यदि महोषध पण्डित के घर में कोई तक्र ले तो उसे घड़े समेत ही देकर आना।"

वह पण्डित के गृह-द्वार पर पहुँच, इधर-उधर घूमती हुई आवाज़ लगाती थी, "तक्र ले लो।"

द्वार पर खड़ी हुई अमरा देवी ने उसकी करतूत देखी तो सोचा कि कोई खास बात होगी। यह अन्यत्र क्यों नहीं जाती है! उसने इशारे से सभी दासियों को घर में जाने को कह स्वयं उस दासी को आवाज़ दी, "अरी! आ, तक्र लेंगे।" जब वह आई तो उसने दासियों को आवाज़ दी। उन्हें न आता देख उसने उसी दासी को कहा, "जा, दासियों को बुलाकर ला।" फिर घड़े में हाथ डालकर मणि देख ली। जब वह लौटी तो पूछा, "तू किसके पास है?"

"मैं सेनक पण्डित की दासी हूं।"

तब उसका और उसकी माँ का नाम पूछकर कहा, "तो तक्र दे।"

वह बोली, "आप लेती हैं तो आपसे मैं मूल्य लेकर क्या करूँगी? घड़े के साथ ही ले लेंगे।"

"तो जा।"

उसे विदा कर उसने अपने पास लिख रखा कि सेनकाचार्य ने अमुक दासी की अमुक पुत्री के हाथ राजा की चूड़ामणि भेंटस्वरूप भेजी।

पुक्कुस ने चमेली के फूलों की चंगेर में रखकर स्वर्णमाला भिजवाई। काविन्द ने पत्तों की टोकरी में कम्बल रखकर भिजवाया। देविन्द ने जौ की मुट्ठी के अन्दर लपेटकर स्वर्ण-पादुका भिजवाई। उसने वे सभी चीज़ें लीं, कागज़ पर नाम आदि चढ़ा, महोषध पण्डित को सूचित कर रख लीं। वे चारों जने भी राजकुल पहुँचे और पूछा, "देव! क्या आप चूड़ामणि नहीं धारण करते?"

राजा बोला, "लाओ,

मणि नहीं दिखाई दी। शेष चीज़ें भी नहीं दिखाई दीं। चारों बोले, "देव! आपका आभरण महोषध पण्डित के घर में है। वह स्वयं उसे धारण करता है। महाराज! वह तुम्हारा शत्रु है।"

इस प्रकार उन्होंने राजा का मन खट्टा कर दिया।

8

पण्डितों के दूतों ने उसे सूचना दी। उसने सोचा, 'राजा से भेंट करके पता लगाऊँगा।' वह राजा की सेवा में पहुँचा। राजा ने क्रोध के मारे कहा, "मैं नहीं जानता कि यहाँ आकर क्या करेगा?"

उसने उसे अपने पास आने नहीं दिया। पण्डित ने राजा को क्रुद्ध जाना तो वह अपने निवासस्थान को ही लौट आया। राजाज्ञा हुई, "उसे पकड़ो!"

पण्डित को जब पता चला तो उसने चल देने का निश्चय किया। उसने अमरा देवी को संकेत किया और वेश बदलकर नगर से निकल पड़ा। वह दक्षिण यव मज्झक गाँव पहुँचकर एक कुम्हार के घर में काम करने लगा।

सारे नगर में हल्ला हुआ कि पण्डित भाग गया। सेनक आदि चारों जनों ने कहना आरम्भ किया, "चिन्ता न करो। क्या हम अपण्डित हैं!" उन्होंने बिना एक-दूसरे को सूचना दिये ही अमरा देवी के पास भेंट भेजी। उसने चारों द्वारा भिजवाई भेंट ले ली और कहला भेजा कि अमुक-अमुक समय आएँ। आने पर उसने उनका सिर मुँडवाया और विष्ठा के कुएँ में फेंकवा उन्हें बहुत कष्ट दिया। फिर राजा को सूचना दे, उनके साथ चारों रत्न लिवा राजभवन पहुँची। वहाँ राजा को प्रणाम कर खड़ी हुई और बोली, "देव! महोषध पण्डित चोर नहीं हैं। चोर ये हैं। इनमें सेनक मणि-चोर है। पुक्कुस स्वर्णमाला-चोर है। काविन्द कम्बल-चोर है और देविन्द स्वर्ण पादुका-चोर। अमुक महीने में, अमुक दिन, अमुक दासी की अमुक कन्या

के हाथ उन्होंने यह भेंट भेजीं। ये पत्र देखें। अपनी चीज़ें लें और चारों को सम्भालें।"

इस प्रकार उन चारों जनों को महाविपत्ति में डाल राजा को नमस्कार कर घर गयी। राजा ने महोषध पण्डित के भाग जाने की आशंका से और दूसरे पण्डित मन्त्री न होने के कारण उन्हें कुछ नहीं कहा। केवल इतना ही कहा, "नहाकर अपने-अपने घर जाओ।"

उस समय छत्र में रहने वाली देवी को जब महोषध पण्डित की धर्म-देशता सुनने को न मिली तो उसने उसका कारण जान, पण्डित को लाने का उपाय करने की बात सोची। उसने रात के समय छत्र की गोलाई के विवर में खड़े होकर चार प्रश्न पूछे। राजा ने उनका उत्तर न जानने के कारण "दूसरे पण्डितों से पूछूँगा" कह एक दिन की मोहलत माँगी। फिर उसने पण्डितों को आने के लिए कहला भेजा। वे बोले, "सिर मुँडा होने के कारण हमें बाज़ार से गुजरते लज्जा आती है।" राजा ने सिर ढकने के लिए चार वस्त्र भिजवाये। उन्हें सिर ढकने के लिए वस्त्र मिले तो वे आकर बिछे आसनों पर बैठे।

राजा ने पूछा, "सेनक! आज रात छत्र में रहने वाली देवी ने आकर मुझसे चार प्रश्न पूछे। मैंने न जानने के कारण कहा है कि मैं पण्डितों से पूछूँगा। अब मुझे इन प्रश्नों का उत्तर कहें। पहला प्रश्न है—

'हन्ति हत्थेहि पादेहि मुखञ्च परिसुम्भति
सवे राजा पियो होति कं तेन अभिपस्ससि'

[हाथ-पाँव से पीटता है, मुँह को भी पीटता है। हे राजन्! वह प्रिय होता है। तू ऐसा किसे देखता है?]

सेनक 'क्या मारता है, क्या मारता है' कहकर प्रलाप करता रहा। उसे न यह सिरा दिखाई दिया और न वह सिरा। शेष भी प्रतिहत हो गये। राजा को अफसोस हुआ।

रात को फिर देवी ने पूछा, "प्रश्नों का उत्तर ज्ञात हुआ?"

राजा बोला, "चारों पण्डितों से पूछा, वे भी नहीं जानते!"

देवी बोली, "वे क्या जानेंगे ? महोषध पण्डित को छोड़ और कोई इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकता। यदि उसे बुलवाकर इन प्रश्नों का समाधान नहीं करायेगा, तो इस जलते हुए हथौड़े से तेरा सिर फोड़ दूँगी।" इस प्रकार राजा को डराकर उसने यह भी कहा, "महाराज ! आग की आवश्यकता होने पर जुगनू को जलाना और दूध की आवश्यकता होने पर (किसी जानवर के) सींग को दुहना उचित नहीं।"

मृत्यु से भयभीत राजा ने फिर एक दिन चारों अमात्यों को बुलवाया और आज्ञा दी, "तात ! तुम चारों, चार रथों पर बैठ, चारों नगर-द्वारों से निकलकर जाओ और जहाँ कहीं भी मेरे पुत्र महोषध पण्डित को देखो, वहीं से सत्कार करके शीघ्र ले आओ।" उनमें से तीन जनों ने पण्डित को नहीं देखा। किन्तु जो दक्षिण द्वार से निकला था उसने देखा कि महोषध पण्डित मिट्टी लाया है और आचार्य का चाक घुमाकर, मिट्टी पुते शरीर से, घास पर बैठा, मुट्ठी-मुट्ठी बाँधकर अल्प-सूप वाले जौ-भात को खा रहा है।

पण्डित ने ऐसा क्यों किया ? उसने यही सोचकर ऐसा किया कि राजा पण्डित है। उसे सन्देह हो गया है कि महोषध पण्डित राज्य लेगा। जब वह सुनेगा कि कुम्हार का काम करके जीविका चला रहा है तो वह सन्देहरहित हो जायगा।

उसने जब जाना कि अमात्य उसके पास आया है तो सोचा कि मेरा ऐश्वर्य फिर पूर्ववत् हो जायगा और मैं अमरा देवी के हाथ से तैयार किया गया नाना प्रकार का श्रेष्ठ भोजन ही करूँगा। उसके हाथ में जो भोजन का कौर था, उसे छोड़ जाकर, उसने मुँह को धो लिया। उसी क्षण वह आ पहुँचा। वह सेनक के पक्ष का ही था। वह महोषध पण्डित को ठेस पहुँचाते हुए बोला, "पण्डित ! आचार्य सेनक का कहना ही कल्याणकारी है, तेरे ऐश्वर्यहीन होने पर तेरी वैसी प्रज्ञा से कुछ सहारा नहीं मिला। अब मिट्टी पुते शरीर से घास के आसन पर बैठा ऐसा भोजन कर रहा है।"

महोषध पण्डित का उत्तर था, "मूर्ख ! मैं अपने प्रज्ञा-बल से अपने उस ऐश्वर्य को पुनः प्राप्त करने की इच्छा से ऐसा करता हूं।"

तब उसे आमात्य ने कहा, "पण्डित ! छत्र में रहने वाली देवी ने राजा से प्रश्न पूछा। राजा ने चारों पण्डितों से प्रश्न किया। एक भी प्रश्न का उत्तर न दे सका, इसलिये राजा ने मुझे तेरे पास भेजा है।"

"ऐसा होने पर भी तू प्रज्ञा का प्रताप नहीं देखता है ! ऐसे समय में ऐश्वर्य सहायक नहीं होता, प्रज्ञा का ही सहारा होता है।" कह महोषध पण्डित ने प्रज्ञा का बखान किया।

तब अमात्य ने, 'पण्डित जहाँ दिखाई दे, वहीं से नहलाकर, कपड़े पहनाकर लाओ, 'राजाज्ञा होने के कारण, राजा के दिये हुए हज़ार और दुशाले का जोड़ा महोषध पण्डित के हाथ में रखा। कुम्हार डरा कि मैंने महोषध पण्डित से नौकर का काम लिया। पण्डित ने उसे 'आचार्य ! डरें नहीं। तुम्हारा हम पर बहुत उपकार है।' कह उसे निश्चिन्त कर उसे हज़ार दिये और मिट्टी पुते शरीर से ही रथ में बैठ नगर में प्रवेश किया।

अमात्य ने राजा को सूचना भेजी। राजा ने पूछा, "तात ! तूने पण्डित को कहाँ देखा ?"

"देव ! दक्षिण यव मञ्झक ग्राम में कुम्हार का काम करके जीवन-यापन कर रहा था। यह कहने पर कि आपने बुलाया है, बिना स्नान किये ही, मिट्टी पुते शरीर से ही चला आया है।"

राजा ने सोचा, 'यदि मेरा शत्रु होता तो ऐश्वर्यशाली ढंग से रहता। यह मेरा शत्रु नहीं है।' उसने कहलाया, "मेरे पुत्र को कहो कि अपने घर जाकर, नहाकर, अलंकृत होकर जैसे मैंने कहा है वैसे ही करके आये।" पण्डित ने वैसा ही किया और आया। प्रविष्ट होने की आज्ञा होने पर राजा को प्रणाम कर एक ओर खड़ा हुआ। राजा ने उससे कुशल-क्षेम पूछते हुए यह गाथा कही—

"सुखी हि एके न वरोन्ति पापं अवण्ण संसग्गभया पुनेके,
पहू समानो विपुलत्थचिन्ती किं कारण येन करोसि दुक्खं ॥"

[कुछ लोग सुख में सन्तोष मान पाप नहीं करते, कुछ लोग निन्दा के भय से पाप नहीं करते। तू सामर्थ्यवान् और नाना प्रकार से विचारवान है, तूने मुझे क्यों दुखी नहीं किया ?]

महोषध पण्डित का उत्तर था—

"न पण्डिता अत्त सुखस्स हेतु पापानि कम्मानि समाचरन्ति,
दुक्खेन फुट्ठा खलितत्तापि सन्ता दन्दा च दोसा न जहन्ति धम्मं"

[आत्म-सुख के लिये पण्डित पाप कर्म नहीं करते। दुखी होने पर और ऐश्वर्य-विहीन हो जाने पर इच्छा तथा द्वेष के वशीभूत हो धर्म नहीं छोड़ते हैं।]

फिर राजा ने उसकी परीक्षा लेने के लिए 'क्षत्रिया-माया' की बात करते हुए यह गाथा कही—

"येन केनचि वण्णेन मुदुना दारुणेन वा
उद्धरे दीनमत्तानं पच्छा धम्मं समाचरे ॥"

मृदु अथवा कठोर किसी उपाय से भी हो पहले अपनी दीनता दूर करे। पीछे धर्माचरण करे।]

तब महोषध पण्डित ने वृक्ष की उपमा देते हुए यह गाथा कही—

"यस्स रुकखस्स छायाय निसीदेय्य सयेय्य वा,
न तस्य साखं भञ्जेय्य मित्तदुब्भो हि पापको ॥"

[जिस पेड़ की शाखा में बैठे या लेटे, उस शाखा को न तोड़े। मित्र-द्रोह पाप-कर्म है।]

फिर राजा को दोष देते हुए कहा—

"यस्मा हि धम्मं मनुजो विजञ्जा येचस्स कंखं विनयन्ति सन्तो,
तं हिस्स दीपञ्च परायणञ्च न तेन मित्तं जर येथ पञ्जो ॥"

[आदमी जिनसे 'धर्म' जाने और जो उसकी सन्देह निवृत्ति करे वेही उसके शरण स्थान होते हैं। बुद्धिमान आदमी को चाहिए कि उससे मैत्री बनाये रखे।]

और राजा को उपदेश भी दिया—

"अलसो गिही काम भोगी न साधु असञ्जत पब्बजितोन साधु।
राजा न साधु अनिसम्यकारी यो पण्डितो कोधनो तं न साधु ॥"

निसम्म खत्तियो कयिरा नानिसम्यदिसम्पति ।
निसम्यकारिनो राज यसो कित्तिच वड्ढति ॥"

[कामभोगी आलसी गृहस्थ अच्छा नहीं। असंयमी प्रव्रजित अच्छा नहीं। अविचारपूर्वक काम करने वाला राजा नहीं। जो पण्डित क्रोधी हो वह अच्छा नहीं। क्षत्रिय को चाहिये कि विचार-पूर्वक काम करे। राजा को चाहिये कि बिना विचारे काम न करे। हे राजन! विचारपूर्वक कार्य करने वाले का ऐश्वर्य और कीर्ति बढ़ती है।]

ऐसा कहने पर राजा ने महोषध पण्डित को श्वेत-छत्र के नीचे राज-सिंहासन पर बिठाकर स्वयं नीचे आसन पर बैठ कहा, "पण्डित! श्वेत-छत्र में रहने वाली ने मुझसे चार प्रश्न पूछे। चारों पण्डित नहीं बता सके। तात! प्रश्नों का उत्तर दे।"

"महाराज! चाहे छत्र में रहने वाली देवी हो, चाहे चातुर्महाराज आदि देवता हों, जिस किसी का भी पूछा हुआ प्रश्न हो, उत्तर दूँगा। महाराज! देवता का पूछा हुआ प्रश्न कहें।"

राजा ने जैसे देवी ने पूछा था, उसी प्रकार कहते हुए पहली गाथा कही—

"हन्ति हत्थेहि पादेहि मुखञ्च परिसुम्मति,
स वे राज पियो होति चं तेनमभिपस्ससि ॥"

[हाथ-पाँव से पीटता है, मुँह को भी पीटता है। हे राजन्! वह प्रिय होता है। तू ऐसा किसे देखता है ?]

गाथा सुनते ही महोषध पण्डित को आकाश में चन्द्रमा के प्रकट होने के समान उसका अर्थ प्रकट हो गया। पण्डित ने कहा, "महाराज! सुनें। जब माँ की गोद में लेटा हुआ बच्चा प्रसन्नतापूर्वक खेलता हुआ माता को हाथ-पाँव से पीटता है, केसों को नोचता है, मुँह पर मुक्के मारता है, तब माँ 'अरे चोर पुत्र! ऐसे क्यों मारता है!' आदि प्रिय वचन कहती हुई प्रेम के आधिक्य से उसका आलिंगन कर स्तनों के बीच में लिटा चूमती है। ऐसे समय वह बच्चा उसका प्रियतर होता है, उसी प्रकार पिता का।"

इस प्रकार आकाश में सूर्य उगाने की तरह स्पष्ट करके प्रश्न का उत्तर दिया। यह देख छत्र की गोलाई के विवर में से देवी ने निकल आधा शरीर बाहर प्रकट कर मधुर स्वर से साधुकार दिया, "प्रश्नोत्तर ठीक दिया गया।" फिर दिव्य पुष्प-गन्ध से रत्न चंगेर भर बोधिसत्व की पूजा की और अन्तर्धान हो गई। राजा ने भी पुष्पादि से महोषध पण्डित की पूजा की।

फिर दूसरे प्रश्न की बात कर, पण्डित के 'महाराज! पूछें' कहने पर दूसरी गाथा कही—

"अक्कोसति यथाकायं आगमञ्चस्स न इच्छति,
स वे राज पियो होति कं तेनमभिपस्ससि॥"

[यथेच्छ गाली देती है और उसके आगमन तक की इच्छा नहीं करती। राजन! वही प्रिय होता है। तू ऐसा किसे देखता है?]

महोषध पण्डित ने समझाया, "महाराज! सात-आठ वर्ष की आयु हो जाने पर जब बच्चा सन्देश ले जाने योग्य होता है तो माता उसे कहती है, 'खेत पर जा। दूकान पर जा।' वह कहता है, 'यदि यह-यह खाने को देगी, तो जाऊँगा।' माता, 'अरे पुत्र!' कह खाने को देती है। वह खा चुकने पर बोलता है, 'माँ! तू तो ठंडी छाया में बैठती है, मैं बाहर काम करने जाऊँ।' वह हाथ-मुँह बनाकर नहीं जाता है। माँ गुस्से हो डण्डा लेकर उसका पीछा करती है, 'तू मेरे पास से खाकर अब खेत में कुछ भी नहीं करना चाहता है!' वह जल्दी से भाग जाता है। वह उसे नहीं पकड़ सकती, तो कहती है, 'अरे दरिद्र! जा, चोर तुझे टुकड़े-टुकड़े कर दें।'

"इस प्रकार यथेच्छ गालियाँ देती है। जो मुँह से कहती है उससे प्रतीत होता है कि वह उसका लौटकर आना तनिक भी पसन्द नहीं करती। वह दिनभर खेलता रहकर शाम को घर आने का साहस न कर सम्बन्धियों के घर चला जाता है। माता भी उसके आने की प्रतीक्षा करती है। जब उसे आता नहीं देखती तो सोचती है कि शायद वह आने में डरता है। वह शोकाकुल हो आँखों में आँसू भर सम्बन्धियों के घर खोजती है। वहाँ पुत्र को देख, उसका आलिंगन करती है,

चूमती है और दोनों हाथों से ज़ोर से पकड़ प्रेम से विह्वल हो कहती है, 'पुत्र ! मेरे कहने का भी ख्याल करता है !'

"इस प्रकार महाराज ! क्रोध के समय माँ को पुत्र और भी प्रिय हो उठता है ।" कह दूसरे प्रश्न का भी उत्तर दिया । देवी ने भी उसी प्रकार पूजा की । राजा ने भी पूजा की ही ।

तब राजा ने तीसरा प्रश्न पूछा—

"अब्भखाति अभूतेन अलिकेनमभिसारये,
स वे राजा पियो होति कं तेनमभिपस्ससि ।।"

[झूठी बात कही जाती है, झूठा दोषारोपण किया जाता है। राजन्, वही प्रिय होता है । तू ऐसा किसे देखता है ?]

महोषध पण्डित ने समाधान किया, "महाराज ! जब लोगों का संकोच कर एकान्त में पति-पत्नी मिलते हैं तब परस्पर खेलते हुए वे एक-दूसरे पर मिथ्यारोप करते हैं, 'तेरा मुझसे प्रेम नहीं है, तेरा हृदय अन्यत्र है ।' तब वे परस्पर और भी अधिक प्रेम करते हैं। महाराज ! इसी प्रकार इस प्रश्न का समाधान समझें ।"

देवी ने वैसे ही पूजा की । राजा ने भी पूजा कर, अगले प्रश्न की बात कर, 'महाराज ! पूछें' कहने पर चौथी गाथा कही—

हरं अन्नञ्च पानञ्च वत्थ सेनासनानि च,
अञ्जदत्थु हरा सन्ता ते वे राजा पिया होन्ति कं तेनमभिपस्ससि ।"

[अन्न, पान, वस्त्र तथा शयनासन ले जाते हैं। वे निश्चय से ले जाते हैं। राजन् ! वे प्रिय होते हैं। तू ऐसा किसे देखता है ?]

तब बोधिसत्व ने समाधान किया, "महाराज ! यह प्रश्न धार्मिक श्रमन-ब्राह्मणों से सम्बन्ध रखता है । श्रद्धावान लोग इस लोक तथा परलोक में श्रद्धावान हो देते हैं, देने की इच्छा करते हैं । वैसे लोगों से श्रमन ब्राह्मण जब याचना करते हैं और जो मिलता है उसे ले जाते हैं, खा लेते हैं तो वे उन्हें खाते, ले जाते देख उनसे और भी प्रेम करते हैं कि हमारे ही पास से अन्न आदि ग्रहण करते हैं। इस प्रकार निश्चय से वे याचना करने वाले तथा ले जाने वाले प्रिय होते हैं।"

इस प्रश्न का उत्तर देने पर तो देवी ने वैसे ही पूजा की और साधुकार दे, सात रत्नों से भरी रत्नचंगेर महोषध पण्डित के चरणों में अर्पण की, "पण्डित ! ले।"

राजा ने भी प्रसन्न हो उसे सेनापति बना दिया। उसके बाद से महोषध पण्डित का ऐश्वर्य बहुत हो गया।

9

यह बात सुनी तो उदुम्बरा देवी के मन में पण्डित के बारे में पर्वत-जितना बड़ा शोक पैदा हुआ। उसने सोचा—'एक उपाय से राजा को आश्वासन दे, राजा के सो जाने पर अपने छोटे भाई को सन्देशा भेजूंगी।' वह बोली, "महाराज, आपने ही उस गृहपति-पुत्र को ऐश्वर्य दिया और आपने ही उसे सेनापति बनाया। क्या अब वह आपका ही शत्रु हो गया? शत्रु छोटा नहीं होता। उसे रास्ते से हटाना ही चाहिये। आप चिंता न करें।" उसका शोक हल्का होने से उसे नींद आ गई।

देवी उठी। कमरे में गई। जाकर पत्र लिखा, "महोषध ! चारों पण्डितों ने फूट डाल दी है। राजा ने क्रोधित हो कल दरवाज़े पर तेरे वध की आज्ञा दे दी है। कल राजकुल मत आना। आना तो नगर को हस्तगत करके तैयारी करके आना।" फिर उसे लड्डू के अन्दर रख, लड्डू को धागे से बाँध, नये वर्तन में रख, सुगन्धित कर, मोहर लगा सेवक स्त्री को दिया, "यह लड्डू ले जाकर मेरे छोटे भाई को दे।" उसने वैसा ही किया। यह प्रश्न नहीं पूछा जाना चाहिये कि वह रात को कैसे निकले। राजा ने पहले ही देवी को वर दिया था, इसीलिए उसे किसी ने नहीं रोका। पण्डित ने भेंट ले विदा किया। उसने जाकर सूचना दी, "दे आई।" तब देवी राजा के पास जाकर लेट रही। पण्डित ने भी लड्डू फोड़ा, चिट्ठी पढ़ी, बात जानी और जो कुछ करना है उसका विचार कर शैया पर लेट रहा।

शेष चारों जन प्रातःकाल ही हाथ में तलवार लिये दरवाज़े पर आ खड़े हुए। जब उन्हें पण्डित न दिखाई दिया तो दुखी होकर राजा के पास गये। राजा ने पूछा, "पण्डितो ! क्या गृहपति-पुत्र मारा गया ?"

"देव ! दिखाई नहीं दिया।"

सूर्योदय होते ही, नगर को अपने वश में कर, जहाँ-तहाँ सैनिक नियुक्त कर, लोगों को साथ ले, रथ पर चढ़ बड़ी भीड़ के साथ महोषध पण्डित भी राजद्वार पर पहुँचा। राजा खिड़की खोले खड़ा देख रहा था। पण्डित ने रथ से उतर उसे प्रणाम किया।

राजा ने सोचा—'यदि यह मेरा शत्रु होता तो मुझे नमस्कार न करता।' उसे बुलवाकर राजा शैया पर बैठा। पण्डित भी जाकर एक ओर बैठा। चारों पण्डित भी एक ओर वहीं बैठे। राजा ने सर्वथा अजानकार की भाँति कहा, "तात ! कल के गये तुम इस समय आये ! क्या मुझे इसी प्रकार छोड़ दोगे ?" उसने यह गाथा कही—

"अभिदोसगतो इदानि एसि किं सुत्वा किमासङ्कते मनो ते,
को ते किमवोच भूरिपञ्च इङ्घ तं वचनं सुणोम ब्रूहि मे तं ॥"

[कल रात का गया हुआ, अब आया है। क्या बात सुनने से तेरे मन में क्या शंका पैदा हो गई ? हे महाप्रज्ञ ! तुझे किसने क्या कहा है ? हम तेरी बात सुनें। हमें बता।]

पण्डित ने "महाराज ! आपने चारों पण्डितों के कहने पर विश्वास कर मेरे वध की आज्ञा दी, इसी से नहीं आया।" दोषारोपण करते हुए गाथा कही—

"पञ्ञो बज्झो महोसधोति यदि ते मन्तयितं जनन्दि दोसं
भरियाय रहोगतो असंसि गुय्हं पातुकतं सुतं ममेतं ॥"

[क्योंकि आपने रात के समय कहा कि प्रज्ञावान महोषध पण्डित बध्य है और आपने अपनी भार्या पर एकान्त में यह रहस्य प्रकट किया, यह मैंने सुन लिया।]

राजा ने यह सुनते ही क्रोध से देवी की ओर देखा—'इसी ने उसी समय सन्देश भिजवाया होगा।'

पण्डित को पता लगा तो उसने राजा को सम्बोधित करते हुए कहा, "देव ! क्या देवी पर क्रोध कर रहे हैं ? मैं भूत, भविष्यत्, वर्तमान सब जानता हूं। देव ! मान लें कि आपका रहस्य तो मुझे देवी ने बता दिया हो, आचार्य सेनक तथा पुक्कुसादि का रहस्य मुझे किसने बता दिया ? मैं इनका भी रहस्य जानता ही हूं।"

उसने सेनक का रहस्य बताते हुए यह गाथा कही—

"यं सालवनस्मिं सेनको पापकम्पं अकासि असब्भिरूपं
सखिनोव रहोगतो असंसि गुय्हं पातुकतं सुतं ममेतं ॥"

[सेनक ने शालवन में जो असभ्य पाप-कर्म किया, वह उसने एकान्त में अपने मित्र को बताया। इसका प्रकट किया हुआ वह रहस्य भी मैंने सुन लिया।]

राजा ने सेनक की ओर देखकर पूछा, "क्या यह सत्य है ?"

"देव ! सत्य है।"

राजा ने उसे कारागार में डालने की आज्ञा दी। पण्डित ने पुक्कुस का रहस्य प्रकट करते हुए यह गाथा कही—

"पुक्कुस पुरिसस्स ते जनन्दि उप्पन्नो रोगो अराज पुत्तो
भातुच्च रहोगतो असंसि गुय्हं पातुकतं सुतं ममेतं ॥"

[देव ! पुक्कुस के शरीर में कुष्ट रोग उत्पन्न हुआ है। इसने एकान्त में अपने भाई को बताया। इसका प्रकट किया हुआ वह रहस्य भी मैंने सुन लिया।]

राजा ने उसकी ओर भी देखकर पूछा, "क्या यह सत्य है ?"

"देव ! हाँ।"

राजा ने उसे भी कारागार में भिजवा दिया। पण्डित ने काविन्द का भी रहस्य प्रकट करते हुए कहा—

"आबाधोमं असब्भिरूपो काविन्दो नरदेवेन कुट्ठो,
पुत्तास्स रहोगतो असंसि गुय्हं पातुकतं सुतं ममेतं।"

[यह काविन्द नरदेव नामक यक्ष की आबाधा से युक्त है। इसने एकान्त में पुत्र को बताया। इसका प्रकट किया हुआ वह रहस्य भी मैंने सुन लिया।]

राजा ने उससे भी पूछा, "काविन्द! क्या यह सत्य है?"

"सत्य है।"

राजा ने उसे भी कारागार में डलवा दिया। पण्डित ने देविन्द का रहस्य प्रकट करते हुए यह गाथा कही—

"अट्ठवङ्क मणिरतनं उकारं सक्कोते अददा पितामहस्स,
देविन्दस्स गतं तदज्ज हत्थे मातुच्च रहोगतो असंसि
गुय्हं पातुकतं ममेति॥"

[शक्र ने जो मणिरत्न तुम्हारे पितामह को दिया था वह आज देविन्द के पास है। यह बात उसने एकान्त में माँ को बताई। इस का प्रकट किया हुआ वह रहस्य भी मैंने सुन लिया।]

राजा ने उससे भी पूछा, "क्या यह सत्य है?"

"सत्य है।"

राजा ने उसे भी कारागार में डलवा दिया। इस प्रकार 'पण्डित का वध करेंगे' कहने वाले सभी कारागार में चले गये। पण्डित ने भी 'इसी कारण मैं कहता था कि अपना रहस्य दूसरे पर नहीं प्रकट करना चाहिये, प्रकट करने वाले महाविनाश को प्राप्त होते हैं' कह, आगे धर्मोपदेश देते हुए ये गाथाएँ कहीं—

"गुय्हस्स हि गुय्हमेव साधु नहि गुय्हस्स पसत्थनाविकम्मं,
अनिप्कादाय सदेय्य धीरो निप्कन्तत्थो यथा सुखं भणेय्य॥"

[गुप्त बात का गुप्त रहना ही अच्छा है। गुप्त बात का प्रकट होना अच्छा नहीं। धीर पुरुष को चाहिये कि जब तक काम न बन जाय तब तक गूढ़ बात को मन में रखे। जब काम पूरा हो जाय तब सुखपूर्वक मुँह खोले।]

"न गुय्हमत्थं विवरेय्य रक्खेय्य तं यथानिधं
नहि पातुकतो साधु गुय्हो अत्थो पजानता॥"

[रहस्य को प्रकट न करे। खज़ाने की तरह उसकी रक्षा करे। बुद्धिमान आदमी द्वारा रहस्य प्रकट होना अच्छा नहीं।]

"थिया दुय्हं न संसेय्य, अमित्तस्स च पण्डितो,
यो चामिसेन सेहीरो, हदयत्थेनो च यो नरो।"

[पण्डित आदमी को चाहिये कि न तो स्त्री पर रहस्य प्रकट करे, न शत्रु पर रहस्य प्रकट करे, न भौतिक चीज़ें देने वाले पर प्रकट करे और न ऐसे आदमी पर प्रकट करे जो मन की बात पता लगाना चाहता हो।]

"गुय्हमत्थमसम्बद्धं सम्बोधयति यो नरो
मन्तभेदभया तस्स दासभूतो तितक्खति॥"

[जो आदमी अज्ञात, रहस्य की बात किसी को बता देता है, तब उसके प्रकट न हो जाने के भय से उस आदमी को दूसरे के दास की तरह (कष्ट) सहन करना पड़ता है।]

"यावन्तो पुरिसस्सत्थं गुय्हं जानन्ति मन्तिनं,
तावन्तो तस्स उब्बेगा तस्मा गुय्हं न विस्सजे॥"

[जितने लोग पुरुष के गुय्ह अर्थ को जानते हैं, उतना ही उसका उद्वेग होता है। इसलिये रहस्य नहीं प्रकट करना चाहिये।]

"विविच्च भासेय्य दिवा रहस्सं रत्तिं गिरं नातिवेलं पमुंचे
उपस्सुतिका हि सुणन्ति मन्तं तस्मा मन्तो खिप्पमुपेति भेदं॥"

[दिन में रहस्य-मन्त्रणा करनी हो तो खुली जगह पर मन्त्रणा करे। रात में असमय तक मुँह न खोलता रहे। सुनने वाले मन्त्रणा सुन लेते हैं। इससे मन्त्रणा शीघ्र ही प्रकट हो जाती है।]

राजा ने पण्डित की बात सुनी तो क्रोधित हो आज्ञा दी, "ये चारों पण्डित स्वयं राज्य-बैरी होकर पण्डित को राजद्रोही बताते हैं। जाओ, इन्हें नगर से निकालकर या तो सूली पर चढ़ा दो या सिर काट डालो।"

जब हाथ पीछे बाँधकर ले जाया जा रहा था और प्रत्येक चौराहे पर खड़ा करके सौ-सौ कोड़े लगाये जा रहे थे तो पण्डित ने राजा से

प्रार्थना की, "देव ! ये आपके पुराने अमात्य हैं। इनका अपराध क्षमा कर दें।"

राजा ने 'अच्छा' कह उन्हें बुलवाया और उसी के 'दास' बनाकर उसे सौंप दिया। उसने उन्हें पूर्ववत ही स्वतन्त्र कर दिया। तब राजा ने देश से निकल जाने की आज्ञा दी, "तो मेरी सीमा में न आएँ।"

पण्डित ने 'देव ! इन अन्धे मूर्खों का अपराध क्षमा करें' कह उन्हें क्षमा करवा उनके पूर्व पद उन्हें दिलवाये।

राजा पण्डित से अत्यन्त प्रसन्न हुआ। वह सोचने लगा—'अपने शत्रुओं के प्रति भी इसकी ऐसी मैत्री है, दूसरों के प्रति कैसी होगी।' उसके बाद से वे पण्डित दाँत-हीन साँपों की तरह विनम्र हो गये और कुछ नहीं बोल सके।

10

इसके बाद से पण्डित राजा का अर्थ धर्मानुशासक अमात्य हो गया। उसने सोचा, 'मैं राजा के श्वेत-छत्र राज्य का विचार करता हूं। मुझे अप्रमादी होना चाहिये।' उसने नगर में बड़ी चार-दीवारी बनवाई। वैसे ही छोटी चार-दीवारी के दरवाज़ों के मीनार। अन्दर के मीनार। पानी की खाई। कीचड़ की खाई। सूखी खाई। इस प्रकार तीन खाइयाँ बनवाईं। नगर में पुराने घरों की मरम्मत कराई। बड़ी-बड़ी पुष्करणियाँ खुदवाकर उनमें पानी भरवाया। नगर में सब कोठे धान्य से भरवाये। हिमवन्त प्रदेश से विश्वस्त तपस्वियों के हाथों जल-कंवल के बीज मँगवाये। पानी की नालियाँ साफ़ करा शहर के बाहर भी मरम्मत कराई। क्यों ? भावी खतरे को रोकने के लिये। फिर उसने जहाँ-तहाँ से आये हुए व्यापारियों से पूछा, "कहाँ से आये ?"

"अमुक-अमुक स्थान से।"

"तुम्हारे राजा को क्या प्रिय है ?"

"अमुक वस्तु।"

उसने उन व्यापारियों का सम्मान करवा अपने एक सौ योद्धाओं को बुलवाकर कहा, "मित्रो! मेरी दी हुई भेंटों को लेकर एक सौ राजधानियों में जाओ और वहाँ अपनी रुचि के अनुसार उन-उन राजाओं की भेंट कर, उनकी सेवा में रहते हुए, उनके कार्यों तथा उनकी मन्त्रणाओं की रिपोर्ट मुझे भेजो। मैं तुम्हारे स्त्री-बच्चों का पोषण करूँगा।"

उसने किसी को कुण्डल, किसी को स्वर्ण-पादुका, किसी को खड्ग और किसी को स्वर्ण-मालाएँ दीं जिनमें अक्षर खुदे थे। उसने संकल्प किया कि जब मेरा काम पड़े तभी ये अक्षर प्रकट हों। उन योद्धाओं ने वहाँ जा उन-उन राजाओं को भेंट देकर कहा, "आपकी सेवा में रहने के लिये आए हैं।"

"कहाँ से?"

आने की यथार्थ जगह छोड़ दूसरे-दूसरे स्थानों के ही नाम बताये। जब उन्होंने 'अच्छा' कह उन्हें स्वीकार कर लिया तो वे उनके विश्वस्त बन गये।

एकबल राष्ट्र में संखपाल नाम का राजा आयुध तैयार करवा रहा था और सेना एकत्र कर रहा था। उसके पास जिस आदमी को रखा था उसने सन्देश भिजवाया, "यहाँ का यह समाचार है। कह नहीं सकता कि यह राजा क्या करेगा? किसी को भेजकर स्वयं यथार्थ बात का पता लगवा लें।"

पण्डित ने तोते के बच्चे को बुलवाकर कहा, "मित्र! एकबल राष्ट्र में पहुँचकर यह पता लगा कि संखपाल राजा क्या करने जा रहा है, सारे जम्बूद्वीप में विचरकर मेरे लिये समाचार ला।"

उसने उसे मधु-खील खिलाई, शरबत पिलाया, हज़ार बार पके हुए तेल से परों को माख, पूर्व की खिड़की में खड़े हो उड़ाया।

उसने वहाँ पहुँच, उस आदमी से उस राजा का यथार्थ समाचार जाना और जम्बूद्वीप घूमते हुए कम्पिल राष्ट्र के उत्तर पञ्चाल नगर में पहुँचा।

उस समय वहाँ चूकनी ब्रह्मदत्त राजा राज्य करता था। केवट्ट नाम का ब्राह्मण उसका अर्थ-धर्मानुशासक था—पण्डित चतुर। वह प्रातःकाल उठा तो दीपक के प्रकाश में अलंकृत शयनागार में बहुत-सा ऐश्वर्य देख सोचने लगा—'यह मेरा ऐश्वर्य कहाँ से आया ? और कहीं से नहीं, चूकनी ब्रह्मदत्त के पास से ही। इस प्रकार के ऐश्वर्य-दायक राजा को सारे जम्बूद्वीप में अग्रनरेश बनाना चाहिये। मैं अग्रपुरोहित हो जाऊँगा।'

वह प्रातःकाल ही राजा के पास पहुँचा और पूछा, "देव ! सुखपूर्वक सोये ?" फिर कहा, "देव ! मन्त्रणा करनी है।"

"आचार्य ! कहें।"

"देव ! नगर के भीतर एकान्त नहीं हो सकता। उद्यान में चलें।"

"आचार्य ! अच्छा।" कह राजा उसके साथ उद्यान गया। राजा सेना को बाहर छोड़, पहरा बिठा, ब्राह्मण के साथ उद्यान में घुसा और मंगल-शिला पर विराजमान हुआ। तोते के बच्चे ने यह क्रिया देखी तो सोचा—'यहाँ पण्डित को बताने योग्य कोई बात अवश्य होगी। सुनूंगा।' वह उद्यान में घुसा और मंगल-शाल वृक्ष के पत्तों में छिपकर बैठा।

राजा बोला, "आचार्य ! बोलें।"

"महाराज ! अपने कान इधर करें। चार कानों में ही मन्त्रणा होगी। यदि महाराज मेरे कथनानुसार चलें तो मैं आपको सारे जम्बूद्वीप का राजा बना दूँ।"

वह महान तृष्णा के आधीन था। उसने उसकी बात सुनी तो प्रसन्न हुआ और बोला, "आचार्य ! कहें। आपका कहना करूँगा।"

"देव ! हम सेना इकट्ठी कर पहले छोटे नगर को घेरेंगे। मैं छोटे द्वार से नगर में जाकर राजा से कहूंगा, 'महाराज ! आपको युद्ध करने की आवश्यकता नहीं है। केवल हमारी अधीनता स्वीकार कर लें। आपका राज्य आपका ही रहेगा। युद्ध करेंगे तो हमारी सेना बहुत अधिक होने के कारण निश्चय से आप ही पराजित

होंगे। यदि मेरा कहना मानेंगे तो हम आपको साथी बना लेंगे, नहीं तो युद्ध करके आपको जान से मारकर, सेना ले, दूसरा नगर और फिर अगला नगर, इस प्रकार सारे जम्बूद्वीप का राज्य ले लेंगे।' इस तरह एक सौ राजाओं को अपने नगर ला, उद्यान में (सुरा) पान का मण्डप तनवा, वहाँ बैठे राजाओं को विष-मिश्रित सुरा पिला, उन सभी को जान से मार, एक सौ राजधानियों का राज्य हस्तगत कर लेंगे। इस प्रकार आप सारे जम्बूद्वीप के राजा बन जायेंगे।"

"आचार्य ! अच्छा ऐसा ही करेंगे।"

"महाराज ! यह चार कानों द्वारा ही सुनी मन्त्रणा है। इसे कोई दूसरा नहीं जान सकता, इसलिये देरी न कर शीघ्र निकलें।"

राजा ने प्रसन्न हो 'अच्छा' कह स्वीकार किया।

तोते के बच्चे ने यह बातचीत सुनी तो इसकी समाप्ति पर कोई लटकती हुई चीज़ उतारने की तरह केवट्ट के शरीर पर बीट कर दी। जब वह 'यह क्या है' कहकर आश्चर्य से मुँह खोल ऊपर की ओर देखने लगा तो उसके मुँह में भी गिरा दी। फिर 'किरि-किरि' आवाज़ करता हुआ शाखा से उड़ा और कहता गया, "हे केवट्ट ! तू समझता है कि मेरी मन्त्रणा चार ही कानों तक सीमित है। अभी छः कानों तक जा पहुँच गयी। आगे आठ कानों तक पहुँच, सैंकड़ों कानों तक जा पहुँचेगी।" लोग कहते रह गये, 'पकड़ो-पकड़ो !' तोते का वह बच्चा वायु-वेग से मिथिला पहुँच, पण्डित के निवास-स्थान पर जा पहुँचा। उसकी यह मर्यादा थी कि यदि कहीं से लाई हुई सूचना केवल पण्डित को ही सुनानी होती थी तो उसी के कन्धे पर उतरता था, यदि अमरा देवी के सुनने योग्य होती तो गोद में उतरता था और यदि जनता के भी सुनने योग्य होती तो ज़मीन पर उतरता। वह पण्डित के कन्धे पर आकर बैठा। इस संकेत से जनता समझ गई कि रहस्य की बात होगी। लोग चले गये। पण्डित उसे ऊपर के तल्ले पर ले गया और पूछा, "तात ! तूने क्या देखा या सुना ?"

उसने उत्तर दिया, "देव ! मैं सारे जम्बूद्वीप में और किसी भी नरेश से भय नहीं खाता। किन्तु उत्तर पञ्चाल नगर में चूकनी ब्रह्मदत्त का केवट्ट नाम का पुरोहित है। उसने राजा को उद्यान में ले जाकर चार कानों की मन्त्रणा की। मैं शाखाओं के बीच बैठ, उसके मुँह में बीट गिरा आया हूं।" इस प्रकार जो कुछ उसने देखा-सुना था, वह सब पण्डित को कह सुनाया।

पण्डित ने पूछा, "उनका निश्चय हो गया ?"

उत्तर दिया, "हाँ हो गया।"

पण्डित ने उसका योग्य सत्कार करवा, उसे सोने के पिंजरे में कोमल बिछौने पर लिटवा सोचा—'केवट्ट नहीं जानता कि मैं महोषध हूं। अब मैं उसकी योजना पूरी नहीं होने दूँगा।' उसने नगर में से दरिद्र कुलों को लेकर उन्हें बाहर बसाया। फिर राष्ट्र, जनपद तथा द्वार पर के ग्रामों से समृद्ध बड़े-बड़े कुलों को मँगवाकर नगर में बसाया। बहुत-सा धन-धान्य इकट्ठा कर लिया।

चूकनी ब्रह्मदत्त ने भी केवट्ट के कहने के अनुसार सेना-सहित जाकर एक नगर को घेर लिया। केवट्ट ने, जैसे ऊपर कहा गया है, वहाँ जा, उस राजा को समझा अपने साथ मिला लिया। फिर कहा, "देव ! सेना एकत्र कर दूसरे राजा को घेरें।"

इस प्रकार चूकनी ब्रह्मदत्त ने केवट्ट के उपदेशानुसार चल, वैदेह राजाओं के अतिरिक्त जम्बूद्वीप के सारे राजा अपने आधीन कर लिये।

महोषध पण्डित के नियुक्त पुरुष सूचनाएँ भेजते—'ब्रह्मदत्त ने आज इतने नगर ले लिये, आज इतने नगर ले लिये। अप्रमादी रहें।' वह भी उन्हें कहला भेजता—'मैं यहाँ होशियार हूं। तुम वहाँ बिना घबराये अप्रमादी होकर रहो।'

सात वर्ष, सात महीने और सात दिन में ब्रह्मदत्त ने विदेह राज्य के अतिरिक्त शेष सारे जम्बूद्वीप पर अधिकार कर केवट्ट से कहा, "आचार्य ! मिथिला में विदेह राज्य को लें।"

"महाराज ! महोषध पण्डित के रहने के नगर को न ले सकेंगे।

वह ऐसा ही प्रज्ञावान तथा उपाय-कुशल है।" इस प्रकार उसने चन्द्रमंडल पर आक्रमण करते हुए की तरह उसके गुण कहे। केवट्ट स्वयं भी उपाय-कुशल था। इसलिये उसने राजा को ढंग से ही समझा दिया, "देव! मिथिला राज्य छोटा-सा है। हमारे लिए सारे जम्बूद्वीप का राज्य बहुत है। हमें इस एक राज्य से क्या?"

शेष राजा कहते थे, "हम मिथिला राज्य लेकर ही जय-पान पियेंगे।"

केवट्ट ने उन्हें भी मना किया, "विदेह राज्य लेकर क्या करेंगे? वह राज्य हमारा ही है। रुको।" इस प्रकार उसने उन्हें भी ढंग से ही समझाया। उसकी बात सुन वे रुक गये। महोषध पण्डित के आदमियों ने सूचना भिजवाई—'सौ राजाओं के साथ ब्रह्मदत्त मिथिला आता-आता ही रुक गया। वह वापिस अपने नगर चला गया।' उसने भी कहला भेजा—"इसके आगे वह क्या-क्या करता है, उसकी खबर रखो।'

ब्रह्मदत्त ने भी केवट्ट के साथ मन्त्रणा की कि अब क्या करें? उत्तर मिला, "हम विजय-पान पीयेंगे।" उसने सेवकों को आज्ञा दी, "उद्यान को अलंकृत कर हज़ार चाटियों में शराब रखो। नाना प्रकार के मत्स्य-माँस आदि भी लाओ।" यह समाचार भी पण्डित के आदमियों ने उस तक पहुँचा दिया। वे नहीं जानते थे कि यह विष-मिली सुरा पिलाकर मार डालने का षड्यन्त्र है। किन्तु तोते के बच्चे से सुने रहने के कारण महोपध पण्डित को पता था। उसने अपने आदमियों को कहलाया कि सुरापान के दिन का ठीक-ठीक पता लगाकर सूचित करो। उन्होंने वैसा ही किया। यह सुन पण्डित ने सोचा—'मेरे-जैसे पण्डित के रहते इतने राजाओं का मरना उचित नहीं। मैं इनकी रक्षा करुँगा।' उसने अपने साथ ही जन्मे हज़ार योद्धाओं को बुलवाया और उन्हें यह सिखा-पढ़ाकर भेजा, "मित्रो! चूकनी ब्रह्मदत्त उद्यान अलंकृत करा सौ राजाओं के साथ सुरा पीना चाहता है। तुम वहाँ पहुँचकर जब राजाओं के आसन बिछ गये हों और कोई भी न बैठा हो तो यह कहकर कि चूकनी

ब्रह्मदत्त राजा के आसन के बाद का आसन हमारे राजा का आसन है, उस पर अधिकार कर लेना। यदि उसके आदमी पूछें कि तुम किसके आदमी हो तो उत्तर देना—'विदेह राजा के।' वे यह कहकर कि 'सात दिन, सात माह और सात वर्ष तक तुम्हारे साथ युद्ध करके राज्य लेते समय एक दिन भी यह नहीं देखा कि यह कौन-सा राज्य है, जाओ अन्तिम आसन ले लो।' तुम्हारे साथ झगड़ा करेंगे। तुम झगड़ा बढ़ा देना और कहना कि ब्रह्मदत्त को छोड़ और कोई भी हमारे राजा से बढ़कर नहीं है। और फिर कहना—'हमारे राजा के लिये आसन तक भी नहीं है। अब हम न सुरा पीने देंगे और न मत्स्य-माँस खाने देंगे। इस प्रकार हल्ला करते हुए, शोर मचाते हुए उन्हें आवाज़ से ही उठा, एक बड़ा-सा डण्डा ले, सभी चाटियाँ फोड़, मत्स्य-माँस को बिखेर खाने-योग्य न रहने देना। फिर वेग से सेना में घुस, देव-नगर में घुसे असुरों की तरह हलचल मचा कहना—'हम मिथिला नगर के महोषध पण्डित के आदमी हैं। यदि पकड़ सको तो पकड़ो।' इस प्रकार अपने चल देने की सूचना देकर यहाँ चले आना।"

उन्होंने 'अच्छा' कह उसका कहना स्वीकार किया और पाँच आयुधों से सज्जित हो निकले और वहाँ पहुँचे। वहाँ नन्दन वन की तरह अलंकृत उद्यान में प्रवेश कर, श्वेत-छत्र के नीचे लगे सौ राज-सिंहासनों का ऐश्वर्य देख, जैसे-जैसे पण्डित ने बताया था उसी प्रकार सब कुछ कर, जनता में खलबली मचा मिथिला की ओर लौटे।

राजपुरुषों ने भी उन राजाओं को वह समाचार दिया। ब्रह्मदत्त को क्रोध आया, "इस प्रकार के विष-योग को बिगाड़ दिया।"

राजा भी क्रोधित हुए, "हमें विजय-पान नहीं करने दिया।"

सेना भी क्रोधित हुई, "हमें मुफ्त में शराब नहीं पीने दी।"

ब्रह्मदत्त ने राजाओं को बुलाकर कहा, "आओ, मिथिला चलकर विदेह राजा का सिर तलवार से काट, पैरों से रौंदकर, बैठकर

तब तक ब्रह्मदत्त ने रात्रि के पहले प्रहर में ही लाखों मशालों के साथ आकर नगर को घेर लिया। फिर उसे हाथियों की चारदीवारी से, रथों की चारदीवारी से, घोड़ों की चारदीवारी से घेर, जहाँ-तहाँ लगातार सेना खड़ी कर दी। आदमी खड़े आवाज़ें लगा रहे थे, ताली बजा रहे थे, नाच रहे थे, हल्ला कर रहे थे और गरज रहे थे। प्रदीपों तथा अलंकारों की चमक से सात योजन की सारी की सारी मिथिला प्रकाशित हो गई। हाथी, घोड़े, रथ, पैदल और बाजों आदि की आवाज़ से पृथ्वी फटती-सी जान पड़ी। चारों पण्डितों ने हलचल की आवाज़ सुनी तो अजानकार होने से राजा के पास पहुँचे और बोले, "महाराज! बड़ा हल्ला-गुल्ला है। पता नहीं क्या है? पता लगाना चाहिये।"

यह सुन राजा ने 'ब्रह्मदत्त आ पहुँचा होगा' सोच खिड़की खोली तो उसके आने की बात पक्की हो गई। वह डरा कि अब हमारी जान नहीं बचेगी। हम सभी जान से मारे जायेंगे। वह उन चारों पण्डितों के साथ बैठकर बातचीत करने लगा।

किन्तु जब महोषध पण्डित ने उसके आने की बात सुनी तो सिंह के समान बिना भयभीत हुए सारे नगर में संरक्षण की व्यवस्था की फिर राजा को आश्वस्त करने के लिये राजभवन पर चढ़, प्रणाम कर एक ओर खड़ा हुआ। राजा ने उसे देखा तो वह आश्वस्त हुआ। उसने सोचा, 'मेरे पुत्र महोषध पण्डित के अतिरिक्त दूसरा कोई भी मुझे इस दुख से नहीं छुड़ा सकता।' उसके साथ बातचीत करते हुए राजा ने कहा—

"पञ्चालो सब्ब सेनाय ब्रह्मदत्तो समागतो।
सायं पञ्चालिया सेना अप्पमेय्या महोषध॥
पिट्ठिमती पत्तिमती सब्ब सङ्गामकोविदा।
ओ हारिणी सद्दवती भेटि सङ्खप्प बोधना॥
लोह विज्जा लङ्काराभा धजिनी नामरोहिणी।
सिप्पियेहि सुसम्पन्ना सूरेहि सुप्पतिट्ठिता॥

दसेत्थ पण्डिता आहु भूरिपञ्ञा रहोगमा ।
माता एकादसी रञ्ञो पञ्चालियं पसासति ॥
अथेत्थेकसतं खत्या अनुयुत्ता यसस्सिनो ।
अच्छिन्नरट्ठा व्यथिता पञ्चालिनं वसंगता ॥
यं वदा तक्करा रज्जो अकामा पिय भाणिनो ।
पञ्चाल मनुयायन्ति अकामा वसिनो गता ॥
ताप सेनाय मिथिला तिसन्धि परिवारिता ।
राजधानी विदेहानं समन्ता परिखञ्जति ॥
उद्धं तारक जाताव समन्ता परिवारिता ।
महोषध विजानाहि कथं मोक्खो भविस्सति ॥"

[पञ्चाल-नरेश ब्रह्मदत्त सभी सेनाओं के साथ आया है। हे महोषध ! यह पञ्चालीय सेना असीम है। पीठ पर भार ढो ले चलने वाले, पैदल चलने वाले, सभी योद्धा हैं। वे चुपके से दूसरों का सिर काट लेने वाले हैं, (दस प्रकार के) शब्दों से युक्त हैं और भेरी, शंख आदि की आवाज़ सुन जाग्रत हो जाते हैं, युद्ध-विद्या तथा अलंकारों से प्रकाशित हैं, हाथी-घोड़े हैं, शिल्पियों से युक्त हैं तथा शूरवीरों से प्रतिष्ठित हैं। कहते हैं कि इस सेना में दस प्रज्ञा-वान पण्डित हैं जो एकान्त में मन्त्रणा करते हैं और राजा की माता ग्यारहवीं है जो पञ्चाली सेना का अनुशासन करती है। यहाँ एक सौ अनुयुक्त, यशस्वी क्षत्रिय हैं, जिनके राष्ट्र छीन लिये गए हैं, जो व्यथित हैं और जो पञ्चाली के वशीभूत हैं। जो कहे वह राजा के लिये करने वाले, अनिच्छापूर्वक प्रिय-भाषी बने हुए वे पञ्चाल के वशीभूत होने के कारण उसका अनुगमन करते हैं। उन सेनाओं द्वारा मिथिला नगरी तीव्र सन्धियों में घेर ली गई है। ऐसा लगता है कि विदेहों की राजधानी चारों ओर से खनी जा रही है। आकाश के तारों के समान इसने चारों ओर से घेर लिया है। हे महोषध ! अब तू जान कि मोक्ष किस प्रकार होगा ?]

राजा की यह बात सुनी तो महोषध पण्डित ने सोचा, 'यह राजा मरने से अत्यन्त भयभीत है। रोगी को वैद्य की शरण चाहिये, भूखे

को भोजन चाहिये, प्यासे को पानी चाहिये, इसका भी मेरे अतिरिक्त कोई दूसरा शरण-स्थान नहीं। इसकी घबराहट दूर करता हूं।' तब महोषध पण्डित ने मनोशिलातल पर बैठे हुए सिंह की तरह गर्जना की, "महाराज! डरें नहीं। राज-सुख अनुभव करें। मैं इस अठारह अक्षौहिणी सेना को डण्डे से कौवों को उड़ाने की तरह अथवा कमान से बन्दरों को भगाने की तरह ऐसा भगाऊँगा कि उन्हें अपनी धोती तक की सुध न रहेगी।" उसने यह गाथा कही—

"पादे देव पसारेहि भुञ्ज कामे रमस्सु च।
कित्वा पञ्चालियं सेनं ब्रह्मदत्तो पलायति ॥"

[देव! पाँव पसारकर सोयें। काम-भोगों में रमण करें। ब्रह्मदत्त पञ्चालिय सेना को छोड़कर भाग जायगा।]

पण्डित ने राजा को आश्वस्त कर, निकलकर, नगर में उत्सव-भेरी बजवाई। उसने नागरिकों को भी आश्वस्त किया, "तुम चिन्ता मत करो। सप्ताह भर तक माला-गन्ध-विलेपन तथा पान-भोजन आदि तैयार कर उत्सव-क्रीड़ा करो। वहाँ लोग इच्छानुसार पान करें, नाचें, बजायें, चिल्लायें तथा ताली बजायें। इसका खर्च मेरे सिर रहे। मैं महोषध पण्डित हूं। मेरा प्रभाव देखो।"

लोगों ने वैसा ही किया। गाने-बजाने का शब्द नगर के बाहर के लोग सुनते थे। छोटे द्वार से लोग अन्दर आते थे। शत्रु को छोड़ औरों को देख-देखकर आने देते। इससे आना-जाना बन्द नहीं होता था। जो नगर में आते वे लोगों को उत्सव मनाते देखते।

चूकनी ब्रह्मदत्त ने भी नगर में हल्ला-गुल्ला सुन अमात्यों से कहा, "हम अठारह अक्षौहिणी सेना के साथ नगर घेरे पड़े हैं। नगर-निवासियों को डर, भय कुछ नहीं है। वे आनन्द मना रहे हैं। वे प्रसन्नता के मारे तालियाँ बजा रहे हैं, आवाजें लगा रहे हैं और गा रहे हैं। यह क्या है?"

उसके नियुक्त गुप्तचरों ने उसे झूठी सूचना दी, "देव! हम एक काम से छोटे दरवाजे से नगर में गये। वहाँ हमने लोगों को उत्सव मनाते देख पूछा, 'भो! सारे जम्बूद्वीप के राजा तुम्हारा नगर घेरे

खड़े हैं। तुम अति प्रमादी हो। यह क्या है?' उनका उत्तर था, 'बचपन में हमारे राजा की एक इच्छा थी। सारे जम्बूद्वीप के राजाओं के नगर को घेर लेने पर उत्सव करेंगे। आज उसकी इच्छा पूरी हो गई है। इसलिये उत्सव-भेरी बजवा, स्वयं ऊँचे तल्ले पर बैठ सुरा-पान करता है।'

राजा ने उनकी बात सुनी तो उसे क्रोध आया। उसने अपनी सेना के एक अंग को आज्ञा दी, "नगर पर जहाँ-तहाँ से आक्रमण करके, खाई तोड़कर, चारदीवारी लाँघ, द्वार की अटारियाँ उजाड़ते हुए, नगर में घुस, गाड़ी में मिट्टी के बर्तन लादकर लाने की तरह लोगों के सिर लाओ और विदेहराज का सिर लाओ।"

यह सुनकर शूर-योद्धा नाना प्रकार के आयुध लेकर द्वार के निकट पहुँचे। पण्डित के आदमियों ने उबला कीचड़ और पत्थर आदि फेंके। वे घबराकर लौट आये। चारदीवारी तोड़ने के लिये खाई लाँघ जाने पर भी अटारियों के बीच में खड़े-खड़े बाण शक्ति, तोमर आदि से वे महाविनाश को प्राप्त होने लगे। पण्डित के योद्धा ब्रह्मदत्त के योद्धाओं को हाथों की नक़लें बनाकर नाना प्रकार से गालियाँ देते और डराते। वे शराब के बर्तन और मत्स्य-माँस की सीखें आगे बढ़ाते, 'तुम्हें नहीं मिलता होगा। थोड़ा पीओ, खाओ।' यह कह आप ही खा जाते। वे चारदीवारी के ऊपर घूमते। दूसरे कुछ न कर सकते। तब वे चूकनी ब्रह्मदत्त के पास गये और बोले, "देव! ऋद्धिमानों के अतिरिक्त और कोई पार नहीं पा सकता।"

चार-पाँच दिन रहकर भी राजा ने जब देखा कि जो (राज्य) लिया जाना चाहिये, वह नहीं लिया जा सकता तो आचार्य से कहा, "हम नगर नहीं ले सकते। एक भी वहाँ तक नहीं पहुँच सकता। क्या करना चाहिये?"

"महाराज! चिन्ता न करें। पानी नगर से बाहर होता है। पानी का क्षय होने पर (राज्य) लेंगे। आदमी जब पानी के कष्ट से पीड़ित होंगे तब तो द्वार खोलेंगे।"

उसने स्वीकार किया, "हाँ ! यह उपाय है।" तब से नगर में पानी नहीं जाने देते।

पण्डित के नियुक्त आदमियों ने यह बात पत्र में लिख, सरकण्डे में बाँध उसे खबर भेजी। उसने भी पहले ही आज्ञा दे रखी थी—'जो कोई सरकण्डे में बँधे कागज़ देखे उसे ले आये।' एक पुरुष ने वह देख उसे पण्डित को दिखाया।

पण्डित ने यह समाचार सुना तो बोला, "वे मेरा महोषध पण्डित होना नहीं जानते।" तब उसने साठ हाथ का बाँस बीच में से फाड़ कर साफ़ कराया और फिर एक साथ जोड़, ऊपर से चमड़े से बँधवा दिया। उसके ऊपर मिट्टी पुतवा दी। फिर हिमालय से ऋद्धि प्राप्त तपस्वियों द्वारा लाये गए कर्दम-कुमुद बीजों को पुष्करिणी के तट पर गारे में बोवा दिया और ऊपर बाँस रखकर पानी से भरवा दिया। एक रात में ही बढ़कर फूल बाँस से बाहर निकल, रतन-मात्र ऊँचा हो निकला। उसने उसे तुड़वाकर अपने आदमियों को दिया, "इसे ब्रह्मदत्त को दो।"

उन्होंने कुमुद की नाल को लपेटा और यह कहकर फेंक दिया कि ब्रह्मदत्त के पाद-सेवक भूख से न मरें। यह लें। कंवल को धारण करें और नाल को पेट-भर खायें। वह पण्डित द्वारा नियुक्त पुरुषों में से ही एक के सेवक के हाथ लगा। वह उसे राजा के पास ले गया, "देव ! इस पुष्प की नाल देखें। हमने इससे पहले इतनी बड़ी नाल नहीं देखी।"

राजा बोला, "इसे मापो।"

पण्डित के आदमियों ने साठ हाथ की नाल को अस्सी हाथ की नाल करके मापा।

तब राजा ने पूछा, "यह कहाँ पैदा हुआ ?"

एक ने झूठा उत्तर दिया, "देव, एक दिन प्यास लगने पर सुरा पीने के लिये छोटे द्वार से मैं नगर में जा घुसा। वहाँ मैंने नागरिकों के खेलने की बड़ी-बड़ी पुष्करिणियाँ देखीं। जनता नौका में बैठकर

फूल तोड़ती है। यह तो किनारे पर उगा हुआ फूल है। गहराई में उगा हुआ फूल तो सौ हाथ का होगा।"

यह सुन राजा ने केवट्ट से कहा, "आचार्य, इस नगर को पानी का त्रास देकर आधीन नहीं किया जा सकता। अपनी मन्त्रणा को वापिस लें।"

"देव! तो धान्य का अभाव करके आधीन करेंगे। धान्य नगर से बाहर होता है।"

"आचार्य! ऐसा हो।"

महोषध पण्डित को पूर्वोक्त प्रकार से ही जब जानकारी हुई तो कहा, "केवट्ट ब्राह्मण मेरे पाण्डित्य को नहीं जानता।" उसने चारदीवारी के ऊपर गारा बिछवा, धान रोप दिये। बोधिसत्वों के अभिप्राय पूरे होते हैं। धान एक ही रात में उगकर चारदीवारी के ऊपर दिखाई देने लग गये। यह भी देख ब्रह्मदत्त ने पूछा, "अरे, यह चारदीवारी के ऊपर हरा-हरा क्या दिखाई दे रहा है?"

पण्डित के नियुक्त आदमियों ने राजा के मुँह से बात छीन लेने की तरह तुरन्त उत्तर दिया, "देव! गृहपति-पुत्र महोषध ने भावी भय का ख़याल कर राष्ट्र से धान्य इकट्ठा करवा कोठे पर भरवा लिया है। शेष धान्य चारदीवारी के पास डलवा दिया है। धूप में सूखते हुए धानों पर वर्षा पड़ने से वे वहीं उग आये। मैं भी एक दिन किसी काम से छोटे द्वार से घुसा और चारदीवारी के पास पड़े धान से धान की मुट्ठी ले, उसे गली में छोड़ दिया। लोग मज़ाक करने लगे—'मालूम होता है भूखा है। धान को पल्ले में बाँध, घर ले जाकर, पका-खा।'

राजा ने यह बात सुनी तो केवट्ट ब्राह्मण से कहा, "आचार्य! धान्य का अभाव करके भी इस नगर को आधीन नहीं किया जा सकता। यह भी ठीक उपाय नहीं है।"

"तो देव! लकड़ी का अभाव होने पर आधीन करेंगे। लकड़ी नगर से बाहर ही होती है।"

"आचार्य ! ऐसा ही करें।"

पण्डित ने पूर्वोक्त विधि से ही इस बात का पता मालूम कर, जैसे चारदीवारी के ऊपर से धान दिखाई देता था, उतना ही ऊँचा लकड़ी का ढेर लगवा दिया। लोग ब्रह्मदत्त के आदमियों का मज़ाक उड़ाते, 'यदि भूख लगी है, यवागू पकाकर पियो।' वे बड़ी-बड़ी लकड़ियाँ फेंकते।

राजा ने प्रश्न किया, "चारदीवारी के ऊपर से लकड़ियाँ दिखाई देती हैं। यह क्या है ?"

"गृहपति-पुत्र ने भावी भय देखकर लकड़ियाँ मँगवाई हैं और उन्हें घरों के पिछवाड़े रखवा दिया है। अतिरिक्त लकड़ियाँ चारदीवारी के पास रखवाई हैं।"

राजा नियुक्त आदमियों के ही मत का हो गया। वह केवट्ट से बोला, "आचार्य, लकड़ी का अभाव पैदा करके भी हम इस नगर को आधीन नहीं कर सकते। इस उपाय को भी वापिस लो।"

"महाराज ! चिन्ता न करें। दूसरा उपाय है।"

"मुझे तुम्हारे उपायों का अन्त नहीं दिखाई देता। हम विदेह-राज को अपने आधीन नहीं कर सकते। अपने नगर को वापिस चलें।"

"यह हमारे लिये लज्जा की बात होगी कि चूकनी ब्रह्मदत्त सौ राजाओं को साथ लेकर भी विदेहराज को आधीन न कर सका। केवल महोषध ही पण्डित नहीं है। मैं भी पण्डित हूं। हम एक तिकड़म करेंगे।"

"आचार्य ! क्या तिकड़म करेंगे ?"

"हम धर्मयुद्ध करेंगे।"

"यह धर्मयुद्ध क्या है ?"

"महाराज ! सेना युद्ध नहीं करेगी। दोनों राजाओं के दोनों पण्डित एक जगह मिलेंगे। उनमें से जो दूसरे को नमस्कार करेगा उसकी हार मानी जायेगी। महोषध यह मन्त्र नहीं जानता है। मैं बड़ा हूं। वह छोटा है। वह मुझे देखकर नमस्कार करेगा। तब

विदेह हार जायगा। हम विदेहराज को हराकर अपने घर जायेंगे। इस तरह हम लज्जित नहीं होंगे। यह धर्मयुद्ध है।"

12

पण्डित को जब इस बात का पता लगा तो उसने भी सोचा—'मेरा भी नाम महोषध पण्डित नहीं, यदि मैं केवट्ट ब्राह्मण से हार जाऊँ।'

ब्रह्मदत्त ने भी 'आचार्य! यह उपाय सुन्दर है' कह एक पत्र लिखवा छोटे द्वार से विदेहराज के पास भेजा, 'कल धर्मयुद्ध होगा। दोनों पण्डितों को धर्मानुसार, न्यायपूर्वक जय-पराजय होगी। जो धर्मयुद्ध नहीं करेगा वह भी पराजित ही समझा जायगा।'

यह सुना तो विदेहराज ने पण्डित को बुलवाकर वह बात कही। पण्डित का उत्तर था, "देव! अच्छा है। कहला भेजें कि कल प्रातःकाल ही पश्चिम-द्वार पर धर्मयुद्ध मण्डल तैयार रहेगा, धर्मयुद्ध मण्डल में आएँ।"

राजा ने जो राजदूत आया था उसी को पत्र दिलवा दिया। पण्डित ने अगले दिन केवट्ट को ही पराजित करने के लिए पश्चिम द्वार पर धर्मयुद्ध-मण्डल तैयार कराया। उन सब आदमियों ने भी 'कौन जाने, क्या हो' सोच पण्डित की रक्षा करने के लिये केवट्ट को घेर लिया। वे सौ राजा भी धर्मयुद्ध-मण्डल पहुँचे और खड़े होकर पूर्व दिशा की ओर देखने लगे। उसी प्रकार केवट्ट ब्राह्मण भी। किन्तु महोषध पण्डित ने प्रातःकाल ही सुगन्धित जल से स्नान किया, लाख के मूल्य का काशी का वस्त्र पहना, सभी अलंकारों से अलंकृत हुआ और नाना प्रकार का श्रेष्ठ भोजन ग्रहण किया। तदनन्तर उसने राजद्वार पर पहुँच, राजा के यह कहने पर 'मेरा पुत्र आवे' राजद्वार में प्रविष्ट हो, राजा को प्रणाम किया और एक ओर खड़ा हुआ। राजा ने पूछा, "तात महोषध! क्या बात है?"

"मैं धर्मयुद्ध मण्डल जाता हूं।"

"मुझे क्या करना चाहिये ?"

"देव ! मैं केवट्ट ब्राह्मण को मणि से ठगना चाहता हूं। आठ स्थानों पर टेढ़ा मणि-रत्न मिलना चाहिये।"

"तात ! ले जा।"

वह मणि ले, राजा को प्रणाम कर महल से उतरा। फिर साथ जन्मे हज़ार योद्धाओं को साथ ले, नब्बे हज़ार कार्षापण मूल्य के श्वेत घोड़े जुते रथ में चढ़कर, प्रातःकाल का जलपान करने के समय द्वार के पास पहुँचा। केवट्ट भी खड़ा उसके आगमन की प्रतीक्षा कर रहा था कि 'अब आता है, अब आता है।' देखते रहने से लगता था, जैसे उसकी गर्दन लम्बी हो गयी है। सूर्य की गर्मी के कारण उसका पसीना छूट रहा था। बहुत से अनुयायियों के साथ होने के कारण समुद्र की तरह फैलता हुआ, केसरी सिंह की तरह भय-रहित, रोमाञ्च-रहित महोषध पण्डित ने भी दरवाज़ा खुलवाया और नगर से निकल, रथ पर चढ़, सिंह की तरह जाग्रत हो चला। सौ राजाओं ने जब उसकी रूप-शोभा देखी तो जाना कि यही श्रीवर्धन का पुत्र महोषध पण्डित है, जिसके समान प्रज्ञावान सारे जम्बू द्वीप में दूसरा कोई नहीं है। वे हज़ार बार चिल्लाये। महोषध पण्डित भी देवताओं से घिरे इन्द्र की भाँति अनुपम श्रीवैभव के साथ, हाथ में मणि-रत्न लिये हुए, केवट्ट की ओर बढ़ा।

केवट्ट ब्राह्मण ने उसे देखा तो अपने आप को सम्भाले न रख सका। वह उसकी अगवानी करता हुआ बोला, "महोषध ! हम दोनों पण्डित हैं। हम तुम्हारे पास इतने समय से रह रहे हैं। तुमने भेंट तक नहीं भेजी। ऐसा क्यों किया ?"

महोषध पण्डित का उत्तर था, "पण्डित ! तुम्हारे योग्य भेंट खोजता रहा। आज यह मणि-रत्न मिला है। लें। इस प्रकार का दूसरा मणि रत्न नहीं है।"

केवट्ट ने उसके हाथ में चमकते हुए मणि रत्नों को देख सोचा, 'यह देना चाहता होगा,' इसलिए हाथ पसार दिये और बोला, "दे।"

महोषध पण्डित ने 'ले' कह मणि-रत्न फैले हुए हाथ की अँगुलियों पर गिरा दिया। भारी मणि-रत्न को ब्राह्मण अँगुलियों पर न सँभाल सका। वह छूटकर महोषध पण्डित के पैरों में जा रहा। लोभ के वशीभूत हो ब्राह्मण उसे उठा लेने के लिये उसके पैरों की ओर झुका। महोषध पण्डित ने उसे उठने नहीं दिया। एक हाथ में कन्धा और दूसरे से पीठ पकड़, मुँह से तो यह कहते हुए कि 'आचार्य! उठें। आचार्य! उठें। मैं छोटा हूं। तुम्हारे नाती के समान हूं। मुझे प्रणाम न करें।' किन्तु हाथ से उसे इधर-उधर कर, उसका मुँह और माथा ज़मीन से रगड़ खून निकाल दिया। फिर 'अन्धे मूर्ख! तू मुझसे प्रणाम की आशा करता था' कह गर्दन से पकड़ फेंक दिया। वह जाकर काफी दूरी पर गिरा और उठकर भाग गया। मणि-रत्न महोषध पण्डित के आदमियों ने ही उठा लिया। महोषध पण्डित की यह आवाज़ कि 'उठो-उठो, मुझे प्रणाम मत करो' सारी परिषद् में छा गयी। उसकी परिषद् ने भी एक ही बार हल्ला कर दिया कि केवट्ट ब्राह्मण ने पण्डित के चरणों की वन्दना की। ब्रह्मदत्त से लेकर सभी राजाओं ने केवट्ट ब्राह्मण को महोषध पण्डित के चरणों में झुका ही देखा था। 'हमारे पण्डित ने महोषध की वन्दना की है। अब वह हमें जीता नहीं छोड़ेगा' सोच वे अपने-अपने घोड़ों पर चढ़ उत्तर-पञ्चाल की ओर भागने लगे। उन्हें भागते देख, महोषध पण्डित के आदमियों ने फिर हल्ला किया, "ब्रह्मदत्त अपने सौ राजाओं सहित भाग रहा है।" यह सुन वे राजा-गण मृत्यु-भय के मारे और भी तेज़ी से भागे। उन्होंने सेना छिन्न-भिन्न कर दी। महोषध पण्डित की परिषद् ने भी शोर मचाते हुए, हल्ला करते हुए अच्छी तरह से लड़ाई की।

सेना से घिरा हुआ महोषध पण्डित नगर को ही लौट आया। ब्रह्मदत्त की सेना तीन योजन जा पहुँची। केवट्ट घोड़े पर चढ़ा और माथे पर से रक्त पोंछता हुआ, सेना तक पहुँच घोड़े को पीठ पर बैठा ही बैठा कहने लगा, "भागो मत! मैंने गृहपति-पुत्र की वन्दना नहीं की है। रुको, रुको!"

सेना बिना रुके, बिना उसकी बात सुने, उसे गालियाँ देते हुए और उसका मज़ाक उड़ाते हुए चलती रही, "पापी ! दुष्ट ब्राह्मण ! 'धर्मयुद्ध करूँगा' कहकर, जाकर उसे नमस्कार किया जो तेरा नाती भी होने के योग्य नहीं है। तेरे लिये कुछ भी अकरणीय नहीं है।"

वह जल्दी से गया और सेना तक पहुँच बोला, "अरे ! मेरे कहने का विश्वास करो। मैंने उसे नमस्कार नहीं किया। उसने मणि से मुझे ठगा है।"

इस प्रकार उसने सभी राजाओं को नाना प्रकार से विश्वास दिला, उस छितराई हुई सेना में विश्वास पैदा किया। वह इतनी बड़ी सेना थी कि यदि वे लोग बालू की एक-एक मुट्ठी अथवा एक-एक ढेला भी फेंकते तो खाई भरकर चार-दीवारी से भी ऊपर ढेर पहुँच जाता। किन्तु बोधिसत्वों के संकल्प पूरे होते हैं। किसी एक ने भी बालू या पत्थर नगर की ओर नहीं फेंका। सभी रुककर अपनी छावनी में ही लौट आये।

राजा ने केवट्ट से पूछा, "आचार्य ! क्या करें ?"

"देव ! किसी को भी छोटे द्वार से न निकलने देकर आना-जाना रोक देंगे। मनुष्यों को जब बाहर निकलना नहीं मिलेगा तो घबरा कर द्वार खोल देंगे। हम शत्रुओं को काबू कर लेंगे।"

महोषध पण्डित को पूर्वोक्त प्रकार से ही जब पता लगा तो सोचा कि यदि ये चिरकाल तक यहाँ रहे तो सुख नहीं ही होगा। इन्हें चतुराई से भगाना ही चाहिये। मैं इन्हें मन्त्रणा द्वारा भगाऊँगा। उसने किसी मन्त्रणा-कुशल अमात्य की खोज करते हुए अनुकेवट्ट को देखा और बुलाकर कहा, "आचार्य ! आपको हमारा एक कार्य करना होगा।"

"पण्डित ! क्या करूँ ?"

"आप चारदीवारी के ऊपर खड़े हो, हमारे मनुष्यों की असावधानी के समय बीच-बीच में ब्रह्मदत्त के मनुष्यों को पूए, मत्स्य-माँस आदि फेंक दिया करें और कहें, 'अरे ! यह और यह खाओ। घबराओ मत। और कुछ दिन टिके रहने का प्रयत्न करो। नगर

के लोग पिंजरे में कैद मुर्गों की तरह हैं। घबराकर शीघ्र ही द्वार खोल देंगे। तुम विदेहराज को तथा दुष्ट गृहपति-पुत्र को पकड़ लेना।' तब हमारे आदमी यह बात सुन तुम्हें गालियाँ देंगे और डरायेंगे, और फिर ब्रह्मदत्त के मनुष्यों की नज़र के सामने ही तुम्हें हाथ-पाँव से पकड़, बाँस की चपटियों से पीटने का ढंग बनायेंगे। फिर सिर की पाँचों चोटियाँ पकड़ उनमें ईंटों की सुर्खी बिखेर देंगे और गले में लाल कनेर की माला डाल, कुछ पीट-पीटकर पीठ में मार की लकीरें उठा देंगे। फिर चारदीवारी पर चढ़ा, टोकरी में फेंक, रस्से से दूसरी ओर उतार देंगे और कहेंगे, 'भेद खोल देने वाले चोर, जा!' वे तुझे ब्रह्मदत्त के आदमियों को सौंप देंगे। वे ब्रह्मदत्त के आदमी तुझे अपने राजा के पास ले जायेंगे। राजा पूछेगा, 'तेरा क्या अपराध है?' उसे ऐसा कहना, 'महाराज! पहले मैं बहुत ऐश्वर्यवान था। गृहपति-पुत्र ने राजा को यह कहकर कि यह भेद बता देने वाला है, मेरा सब ऐश्वर्य नष्ट कर दिया। मैं अपने ऐश्वर्य को नष्ट करने वाले गृहपति-पुत्र का सिर कटवाऊँगा—सोच तुम्हारे मनुष्यों को घबराया देख उन्हें खाना-पीना देता था। इतनी बात से पुराना बैर याद कर उसने मेरी यह हालत करा दी। महाराज! आपके आदमी यह सब हाल जानते हैं।' इस तरह उसे नाना प्रकार से विश्वास दिलाकर कहना, 'महाराज! मेरे आ मिलने के बाद से अब आप चिन्ता न करें। अब बिदेहराज और गृहपति-पुत्र की जान नहीं बच सकती। मैं जानता हूं कि इस नगर की चारदीवारी किस जगह पर मजबूत है और किस जगह पर दुर्बल है और यह भी जानता हूं कि खाई में किस जगह पर मगर-मच्छ आदि हैं और किस जगह पर नहीं हैं? मैं शीघ्र ही नगर पर अधिकार करा दूंगा।' तब वह राजा तुम्हारा विश्वास कर सत्कार करेगा। तुम्हें सेना-सवारी सौंप देगा। तब उसकी सेना को भयानक मगरमच्छों की जगह पर ही उतारना। उसकी सेना मगरों के डर के मारे नहीं उतरेगी। तब कहना, 'देव! तुम्हारी सेना को गृहपति-पुत्र ने फोड़ लिया है। आचार्य-सहित सारे राजाओं में एक

भी ऐसा नहीं है, जिसने रिश्वत न ली हो। ये केवल तुम्हारे इर्द-गिर्द ही घूमते हैं। यदि मेरा विश्वास नहीं है तो सभी राजाओं को आज्ञा दें कि अलंकृत होकर आपके पास आएँ। तब उन सबके पास गृहपति-पुत्र द्वारा अपना नाम लिखकर दिये गए वस्त्र, अलंकार-खड्गादि देखकर विश्वास करें।' वह वैसा कर और वे चीज़ें देख, विश्वास करके, भय के मारे उन राजाओं को विदा कर देगा और तुम से ही पूछेगा, 'पण्डित ! अब क्या करें ?' उसे तुम ऐसा कहना, 'महाराज ! गृहपति-पुत्र बहुत मायावी है। यदि और कुछ दिन यहाँ रहे तो सारी सेना को अपने हाथ में करके आपको पकड़ लेगा। बिना विलम्ब किये आज ही आधी रात के बाद घोड़े पर बैठ भाग चलें। दूसरे के हाथ में पड़कर हमारा मरना न हो।' वह तुम्हारा कहना मान वैसा करेगा। तुम उसके भागने के समय रुककर अपने आदमियों को सूचना देना।"

इतना सब सुना तो अनुकेवट्ट ब्राह्मण बोला, "अच्छा पण्डित ! आपका कहना करूँगा।"

"तो कुछ प्रहार सहने होंगे।"

"पण्डित ! मेरा जीवन और हाथ-पैरों को सुरक्षित रहने देकर शेष जो चाहे कर।"

उसने उसके घर के मनुष्यों का सत्कार करवा, पूर्वोक्त प्रकार से ही अनुकेवट्ट की दुर्दशा कर, रस्सी से उतार, ब्रह्मदत्त के आदमियों तक पहुँचा दिया।

राजा ने उसकी परीक्षा कर उसका विश्वास कर लिया और उसका सत्कार कर उसे सेना सौंप दी। उसने भी सेना को भयानक मगर-मच्छों की जगह ही उतारा। मगरमच्छों द्वारा खाये जाने से, अटारी पर बैठे आदमियों द्वारा बाण, शक्ति तथा तोमर की वर्षा से बींधे जाने के कारण आदमी विनाश को प्राप्त हुए। अब वे भय के मारे आगे नहीं बढ़ते थे। अनुकेवट्ट राजा के पास पहुँचा और बोला, "महाराज ! तुम्हारी ओर से लड़ने वाला अब कोई नहीं है। सभी ने रिश्वत ले रखी है। यदि मेरा विश्वास न हो तो

राजाओं को बुलवाकर उनके पहने वस्त्रादि पर बने अक्षरों को देखो।"

राजा ने वैसा ही किया। जब उसने सभी के वस्त्रों पर अक्षर देखे तो उसे विश्वास हो गया कि सभी ने रिश्वत ली है। उसने पूछा "आचार्य ! अब क्या करना उचित है ?"

"देव ! और कुछ करणीय नहीं है। यदि देर करेंगे तो गृहपति-पुत्र पकड़ लेगा। महाराज ! आचार्य केवट्ट भी केवल माथे पर जख्म करके घूमता है। उसने भी रिश्वत ली है। उसने मणि-रत्न लेकर आपके तीन योजन चले जाने पर भी (आपको) विश्वास दिलाकर फिर रोक लिया। यह भी फूट डालने वाला ही है। मुझे उसका एक रात भी यहाँ रहना अच्छा नहीं लगता। आज ही आधी रात के बाद भाग जाना योग्य है। मेरे अतिरिक्त यहाँ आपका और कोई मित्र नहीं है।"

"आचार्य ! तो फिर आप ही मेरा घोड़ा तैयार कर सवारी की व्यवस्था कर दें।"

अनुकेवट्ट को जब यह विश्वास हो गया कि अब यह निश्चय से भाग जायेगा तो उसने उसे आश्वस्त किया, "महाराज ! डरें नहीं।" फिर स्वयं बाहर निकल, नियुक्त आदमियों को सावधान किया, "आज राजा भागेगा। सोना नहीं।" उसने राजा के घोड़े पर ऐसे ढंग से इतनी अच्छी काठी कसी कि जिसमें वह खूब भाग सके। फिर आधी रात के बाद राजा को सूचना दी, "देव ! घोड़ा कस दिया गया है। अब आप समय जानें।"

राजा घोड़े पर चढ़ भाग गया। अनुकेवट्ट भी घोड़े पर चढ़, उसके साथ थोड़ी दूर जा, रुक गया। ठीक से काठी कसा हुआ घोड़ा खींचे जाने पर भी राजा को लेकर भाग गया।

अनुकेवट्ट ने सेना में घुस हल्ला मचा दिया कि चूळनी ब्रह्मदत्त भागा जा रहा है। नियुक्त आदमियों ने भी अपने आदमियों के साथ मिलकर शोर मचाया। शेष राजाओं ने जब यह सुना तो सोचा कि महोषध पण्डित दरवाज़ा खोल बाहर आया होगा। अब वह हमें

जीवित नहीं रहने देगा। यह सोच डर के मारे वे अपना माल-असबाब सभी कुछ छोड़कर भाग खड़े हुए। मनुष्यों ने अच्छी तरह शोर मचाया कि राजा भागे जा रहे हैं। शेष लोगों ने भी जब यह सुना तो उन्होंने दरवाज़े की अटारियों पर से हल्ला मचाया और तालियाँ बजाईं। उस समय जैसे पृथ्वी फट गयी हो, अथवा समुद्र क्षुब्ध हो उठा हो, सारा नगर अन्दर-बाहर गूँज उठा। अठारह अक्षौहिणी आदमी, यह समझ कि महोषध ने राजा ब्रह्मदत्त के साथ सभी राजाओं को पकड़ लिया है, मृत्यु से डरकर, निराश्रित हो, धोती तक छोड़-छोड़कर भाग गये। छावनी खाली हो गयी। चूकनी ब्रह्मदत्त सौ राजाओं के साथ अपने नगर की ओर भाग गया।

13

अगले दिन प्रातःकाल ही नगरद्वार खोलकर सेना नगर से बाहर निकली और महान् लूट मची देखकर महोषध पण्डित को सूचना दी और पूछा, "पण्डित! क्या करें?"

"इनका छोड़ा हुआ धन हमारा है। सभी राजाओं का सारा धन अपने राजा को दो। सेठों का और केवट्ट ब्राह्मण का धन हमारे यहाँ ले आओ। शेष धन नगरवासी ले जायँ।"

मूल्यवान सामान ढोने में ही आधा महीना गुज़र गया। शेष सामान लाने में चार महीने लगे। महोषध पण्डित ने अनुकेवट्ट को बहुत ऐश्वर्य दिया। उस समय से मिथिलावासी बहुत धनी हो गए। उन राजाओं के साथ उत्तर पञ्चाल में रहते हुए ब्रह्मदत्त को भी एक वर्ष बीत गया।

एक दिन केवट्ट शीशे में मुँह देख रहा था। उसे माथे का जख़्म दिखाई दिया। 'यह गृहपति-पुत्र की करतूत है। उसने मुझे इतने राजाओं के बीच लज्जित किया।' सोचकर वह क्रोधित हुआ और विचार करने लगा, 'मैं कब इससे बदला ले सकूँगा?' उसे सूझा—

"एक उपाय है। हमारे राजा की लड़की का नाम है, पञ्चालचंडी उसका रूप सुन्दर है, अप्सराओं के समान। उसे 'विदेहराज को देंगे' कहकर उसे कामभोग का लोभ दे, काँटे में फँसी मछली के समान महोषध पण्डित के साथ उसे यहाँ बुला, दोनों जनों को मार कर जयपान करेंगे।" यह निश्चय कर वह राजा के पास पहुँचा और बोला, "देव ! एक मन्त्रणा है।"

"आचार्य ! तुम्हारी मन्त्रणा के फलस्वरूप हम अपने वस्त्र तक से विहीन हो गए। अब और क्या करोगे ? चुप रहो !"

"महाराज ! इस उपाय के समान दूसरा उपाय नहीं है।"

"तो कहो।"

"महाराज ! हम दो ही जने रहें।"

"ऐसा ही हो।"

तब ब्राह्मण उसे प्रासाद के ऊपर के तल्ले पर ले गया और बोला, "महाराज ! विदेहराज को काम-भोग का लोभ दे, यहाँ ला, गृह-पति-पुत्र के साथ मार डालेंगे।"

"आचार्य ! उपाय तो सुन्दर है। किन्तु उसे लोभ देकर कैसे लायेंगे ?"

"महाराज ! आपकी लड़की पञ्चालचंडी उत्तम रूप वाली है। उसके सौन्दर्य तथा चातुर्य के सम्बन्ध में कवियों से गीत लिखवाकर उन काव्यों को मिथिला में गवाएँगे कि यदि विदेहराज को इस प्रकार का स्त्री-रत्न प्राप्त नहीं है तो उसके राज्य से क्या लाभ ? जब पता लगेगा कि वह उसकी प्रशंसा सुनने से उस पर आसक्त हो गया है तो मैं जाकर दिन निश्चित कर आऊँगा। मेरे द्वारा दिन निश्चित करके लौट आने पर वह काँटे में फँसी मछली के समान गृहपति-पुत्र को साथ लेकर आयेगा। तब हम उन्हें मार डालेंगे।"

राजा ने उसकी बात मान ली, "आचार्य ! यह उपाय सुन्दर है। ऐसा ही करेंगे।" उस मन्त्रणा को चूकनी ब्रह्मदत्त के शयना-गार में रहने वाली मैना ने प्रत्यक्ष कर लिया। राजा ने चतुर कवियों को बुलाकर बहुत-सा धन दिया और उन्हें लड़की दिखाकर

कहा, "तात ! इसके सौन्दर्य के सम्बन्ध में काव्य-रचना करो।" उन्होंने बहुत सुन्दर गीत बनाकर राजा को सुनाए। राजा ने बहुत धन दिया। कवियों से नाटक करने वालों ने सीखकर उन गीतों को रासलीलाओं में गाया। इस प्रकार वे गीत फैल गये। जब वे गीत मनुष्यों में फैल गए तो राजा ने गवैयों को बुलाकर कहा, "तात ! तुम लोग बड़े-बड़े पक्षियों को लेकर रात को पेड़ पर चढ़ कर वहाँ बैठकर गाओ। फिर बहुत प्रातःकाल उनकी गर्दन में काँसे की पत्तियाँ बाँधकर उन्हें उड़ाकर उतरो।" उसने ऐसा इसलिये करवाया ताकि लोग समझें कि पञ्चालराज की कन्या के शरीर-शोभा का वर्णन देवता तक करते हैं। राजा ने उन कवियों को बुलवाकर कहा, "तात ! अब तुम ऐसे गीत बनाओ जिनमें मिथिला-नरेश के वैभव का और इस कुमारी के सौन्दर्य का वर्णन हो। और उनका आशय हो कि इस प्रकार की कुमारी मिथिला-नरेश के अतिरिक्त समस्त जम्बू द्वीप में और किसी के भी योग्य नहीं है।"

उन्होंने ऐसा कर राजा को सूचना दी। राजा ने उन्हें धन देकर भेजा, "तात ! मिथिला में इसी ढंग से गाओ।"

उन्होंने उन्हें गाया और क्रमशः मिथिला जाकर लीला में भी गाया। उन गीतों को सुनकर जनता ने हज़ारों तालियाँ बजाईं और उन्हें बहुत धन दिया। रात को वे वृक्षों पर चढ़कर भी गाते और पक्षियों की गर्दन में काँसे की पत्तियाँ बाँधकर उतर आते। आकाश में काँसे के बजने की आवाज़ सुन सारे नगर में एक हल्ला हो गया कि पञ्चालराज की कन्या के सौन्दर्य की प्रशंसा देवता तक करते हैं।

राजा ने सुना तो कवियों को बुलाकर अपने घर पर मजलिस लगवाई और यह जानकर सन्तुष्ट हुआ कि इस प्रकार की सुन्दर कन्या को चूकनी राजा मुझे देना चाहता है। उसने प्रसन्न हो उन्हें बहुत धन दिया। उन्होंने भी आकर ब्रह्मदत्त को सूचना दी। तब केवट्ट बोला, "महाराज ! अब मैं दिन तय करने जाता हूं।"

"आचार्य ! अच्छा, कुछ चाहिए ?"

"कुछ भेंट ।"

"ले जायँ ।"

भेंट लेकर बड़े ठाठ-बाट से वह विदेह-राष्ट्र पहुँचा। उसका आना सुनकर नगर में हल्ला हो गया, 'चूकनी राजा तथा विदेह राजा मैत्री स्थापित करेंगे। चूकनी अपनी कन्या विदेह-नरेश को देगा। केवट्ट दिन निश्चित करने आ रहा है।'

विदेहराज ने भी सुना। महोषध पण्डित ने भी। किन्तु पण्डित के मन में हुआ—'उसका आना मुझे अच्छा नहीं लगता। मैं यथार्थ बात जानूँगा।' उसने चूकनी के पास नियुक्त अपने आदमियों के पास सन्देश भेजा—"इस मन्त्रणा की यथार्थ जानकारी भेजो।" उनका उत्तर आया—"हमें भी इसका यथार्थ पता नहीं। राजा और केवट्ट ने शयनागार में बैठकर मन्त्रणा की है। हाँ, राजा के शयनागार में मैना रहती है। वह इस मन्त्रणा को जानती होगी।"

यह सुन महोषध पण्डित ने सोचा—'यह नगर जो कि ऐसे ढंग से सुविभक्त करके बनाया गया है कि किसी शत्रु को मौका न मिल सके, मैं केवट्ट को देखने न दूँगा।' नगरद्वार से राजभवन तक और राजभवन से अपने घर तक दोनों ओर चटाइयों से घेर, और ऊपर से भी चटाइयों से ढक रास्ता बनवाया। उसे चित्रित करवाया। पृथ्वी पर फूल बिखेरे गए, पूर्ण घट रखवाये गए, केले बँधवाये गए तथा उन पर झंडियाँ बँधवाई गईं। केवट्ट ने उस नगर में प्रवेश किया तो उसे सुविभक्त नगर देखने को नहीं मिला। उसने सोचा कि राजा ने मेरे लिये मार्ग सजवाया है। वह यह नहीं समझ सका कि यह नगर को ढकने के लिये किया गया है। वह गया और राजा को भेंट दी तथा कुशल-क्षेम पूछ एक ओर बैठा। फिर राजा द्वारा सत्कृत होने पर उसने अपने आने का उद्देश्य कहकर दो गाथाएँ कहीं—

"राजा सन्थवकामो ते रतनानि पवेच्छति,
आगच्छन्तु ततो दूता मज्जुकापियमाणिनो।

भासन्तु मुदुका वाचा या वाचा पटिनन्दिता,
पञ्चाला च विदेहा च उभो एका भवन्तुते ॥"

[राजा तेरे साथ मैत्री-सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। इसलिये उसने तेरे पास रत्न भेजे हैं। अब वहाँ से और यहाँ से प्रिय-भाषी दूतों का आना हो। वे आनन्दित करने वाली, कोमल वाणी बोलें। पञ्चाल और विदेह के लोग दोनों एक हों।]

इतना कह उसने आगे कहा, "महाराज! हमारा राजा दूसरे महामात्य को भेजने का विचार कर रहा था। फिर उसने मुझे ही भेजा कि दूसरा कोई ठीक से सन्देश न पहुँचा सकेगा। उसने कहा, 'आचार्य! तुम राजा को अच्छी तरह समझाकर ले आओ।'

"महाराज! चलें। सुन्दर कुमारी मिलेगी और हमारे राजा के साथ मैत्री भी स्थापित होगी।"

उसकी बात सुनते ही विदेहराज प्रसन्न हुआ। उसे आसक्ति हो गयी कि सुन्दर कुमारी पाऊँगा। वह बोला, "आचार्य! तुम्हारा और महोषध पण्डित का धर्मयुद्ध में विवाद हो गया था। जाएँ, मेरे पुत्र से मिल लें। दोनों पण्डित परस्पर एक-दूसरे से क्षमा माँग, मन्त्रणा कर यहाँ आएँ।"

इतना सुन केवट्ट महोषध पण्डित से भेंट करने के लिये गया। महोषध पण्डित ने उस दिन सवेरे ही थोड़ा घी पीकर जुलाब ले लिया था। सोचा—'उस पापी के साथ मेरी बातचीत ही न हो।' उसका घर भी घने गीले गोबर से लीपा गया। खम्भों पर तेल मला गया। उसके लेटने का एक पीढ़ा छोड़ शेष सारे मंच-पीढ़े हटा दिये गए। उसने अपने लोगों को संकेत कर दिया, "जब ब्राह्मण बातचीत करने लगे तो कहना, 'ब्राह्मण पण्डित के साथ बातचीत न करें। आज इन्होंने घी पिया है।' मैं भी जब मुँह खोलने लगूँ, तब भी कहना, 'देव! आज आपने घी पिया है, मत बोलें।' तब वह लाल वस्त्र पहन सातवें तल्ले पर निवार की चारपाई पर लेटा।

केवट्ट ने उसकी ड्योढ़ी पर खड़े होकर पूछा, "पण्डित कहाँ हैं?"

"ब्राह्मण ! ज़ोर से न बोल !" लोगों ने कहा, "यदि आना चाहता है तो चुपचाप आ। आज पण्डित ने घी पिया है। हल्ला करना मना है।"

शेष कमरों में भी उसे उसी प्रकार कहा गया। वह सात दरवाज़े लांघकर पण्डित के पास पहुँचा। पण्डित ने बोलने जैसा ढंग किया। आदमियों ने उसे रोक दिया, "देव ! मुँह न खोलें। तेज़ घी पिया है। इस दुष्ट ब्राह्मण से बातचीत करने से क्या प्रयोजन ?" इस प्रकार उसे पण्डित के पास पहुँचने पर न बैठने की जगह मिली और न आश्रय से खड़े होने की ही जगह मिली। वह गीला गोबर लांघकर खड़ा हुआ।

उसे देख एक आदमी ने आँख मारी, एक ने भौं ऊपर उठाई और एक कपाल खुजलाने लगा। वह उनकी क्रिया देख, हत्बुद्धि हो गया। बोला, "पण्डित ! मैं जाता हूं।"

तब एक आदमी ने कहा, "अरे दुष्ट ब्राह्मण ! तुझे कहा कि आवाज़ मत निकाल। फिर बोलता है ! तेरी हड्डियाँ तोड़ दूँगा।"

केवट्ट भयभीत हुआ और रुककर देखने लगा। तब तक एक ने पीठ में बाँस की खपची लगा दी। दूसरे ने गर्दन से पकड़कर ढकेल दिया। तीसरे ने पीठ पर धप्पा मारा। वह शेर के मुँह से मुक्त मृग की तरह भयभीत होकर, राजभवन पहुँचा। राजा भी सोचने लगा— 'आज मेरा पुत्र इस समाचार को सुनकर प्रसन्न होगा। दोनों पण्डितों की महान् धर्म-चर्चा होनी चाहिये। आज दोनों परस्पर क्षमा-याचना करेंगे। यह मेरे लिये बहुत ही अच्छा है।' उसने केवट्ट को देख पण्डित से हुई भेंट का समाचार जानने के लिये पूछा—

"कथन्नु केवट्ट महोसधेन समागमो आसि तदिङ्घ ब्रूहि।
कच्चि ते पटिनिज्झत्तो कच्चि तुट्ठो महोसधो ॥"

[हे केवट्ट ! यहाँ बता कि महोषध से भेंट कैसी रही ? क्या तुम्हारी क्षमा-याचना हो गई ? क्या महोषध सन्तुष्ट हुआ ?]

ऐसा पूछने पर केवट्ट बोला, "महाराज ! आप उसे पण्डित

ये फिरते हैं। उससे बढ़कर तो असत्य पुरुष कोई नहीं है।" उसने गाथा कही—

"अनरियरूपो पुरिसो जनिन्द असम्मोदको थद्धो असब्भिरूपो।
यथा मूगोव बधिरोव न किञ्चत्थं अभासथ ॥"

[हे राजन ! वह तो अनार्य-पुरुष है। सीधी बात न करने वाला है। कठोर है और असभ्य है। उसने तो गूँगे-बहरे के समान मुझसे कुछ बातचीत ही नहीं की।]

राजा ने उसकी बात का न समर्थन किया और न खण्डन किया। उसको तथा उसके साथ आये हुओं को खर्चा दिलवाया और उनके रहने की व्यवस्था कर कहा, "आचार्य ! जायँ, विश्राम करें।"

इस प्रकार उसे विदा कर राजा सोचने लगा—'मेरा पुत्र पण्डित है। मधुर व्यवहार करने में कुशल है। इसके साथ न कुशल-क्षेम की बात की और न प्रसन्नता प्रकट की। उसने कुछ न कुछ भावी भय देखा होगा।' यह सोच उसने स्वयं ही गाथा कही—

"अद्धा इदं मन्तपदं सुदुद्दसं अत्थो सुद्धो नरविरियेन दिट्ठो।
तथा हि कायो मम सम्पवेधति हित्वा सयं को परहत्थमेस्सति ॥"

[निश्चय से यह मन्त्रणा दूसरे द्वारा अच्छी तरह जान ली गई है। वीर आदमी ने यथार्थ बात जान ली। मेरा शरीर काँपता है। मेरा शरीर काँपता है। अपने देश को छोड़कर कौन दूसरे के हस्तगत हो।]

'मेरे पुत्र ने ब्राह्मण के आगमन के दोष को पहचान लिया होगा। वह मैत्री करने के लिये नहीं आया। यह मुझे कामभोग का प्रलोभन दे, नगर ले जाकर पकड़ने के लिये आया है—यह भावी भय उस पण्डित ने देख लिया होगा।' इस प्रकार मन में विचार करता हुआ जब वह डरा हुआ बैठा था तो उस समय चारों पण्डित आये। उसने सेनक से पूछा, "सेनक ! पञ्चाल नगर जाकर चूकनीराज की कन्या ले आना तुझे अच्छा लगता है ?"

"महाराज ! आई लक्ष्मी को ठुकराना योग्य नहीं। यदि आप वहाँ जाकर उसे अंगीकार करेंगे, तो चूकनी ब्रह्मदत्त के अतिरिक्त

सारे जम्बू द्वीप में कोई भी आपकी समानता करने वाला नहीं रहेगा। किसलिये? ज्येष्ठ नरेश की लड़की ले लेने के कारण। 'शेष सारे राजा तो मेरे (अधीन) आदमी हैं, केवल एक विदेह ही मेरे समान है,' सोच सारे जम्बू द्वीप में सुन्दर कन्या वह आपको देना चाहता है। उसका कहना करें। आपके कारण हमें भी वस्त्र-अलंकार प्राप्त होंगे।"

राजा ने शेष पण्डितों से भी प्रश्न किया। उन्होंने भी उसी प्रकार उत्तर दिया। जब राजा उनके साथ बातचीत कर ही रहा था, केवट्ट ब्राह्मण अपने निवास-स्थान से निकल—'राजा की अनुमति लेकर जाऊँगा' सोचकर आया और बोला, "महाराज! हम विलम्ब नहीं कर सकते। हम जाएँगे।"

राजा ने सत्कार कर उसे विदा किया।

14

महोषध पण्डित को जब पता लगा कि वह चला गया तो स्नान कर, अलंकृत हो, राजा की सेवा में आ, नमस्कार कर एक ओर खड़ा हो गया। राजा सोचने लगा—'मेरा पुत्र महोषध पण्डित महामन्त्री है, मन्त्रणा में पारंगत होने के कारण वह भूत, भविष्य और वर्तमान की बातें जानता है। पण्डित यह जानता है कि हमें वहाँ जाना चाहिये अथवा नहीं जाना चाहिये। राग में अनुरक्त और मोह से मूढ़ होने के कारण अपने प्रथम संकल्प पर स्थिर न रह उससे पूछते हुए उसने गाथा कही—

'छन्नं हि एकोव मती समेति, ये पण्डिता उत्तम भूरिपञ्ञा!
यानं अयानं अथवापि ठानं महोसध त्वम्पि मतिं करोहि॥"

[हे महोषध, हम छः प्रज्ञावानों का एक ही विचार है। आप भी अपना विचार कहें कि वहाँ जाना योग्य है? न जाना योग्य है? अथवा यहीं रहना योग्य है?]

यह सुन पण्डित ने सोचा—'यह राजा कामुकता में बहुत आसक्त है। अपने अन्धेपन के कारण, अपनी मूर्खता के कारण इनका कहना मानता है। इसे जाने के दोष बता रोकूँगा।' तब उसने चार गाथाएँ कहीं—

"जानासि खो राज महानुभावो
महब्बतो चूकनी ब्रह्मदत्तो
राजा च तं इच्छति कारणत्थं
मिगं यथा ओकचरेन लुद्दो ॥
यथापि मच्छो बलिसं वङ्कं मंसेन छादितं,
आमगिद्धो न जानाति मच्छो मरणमत्तनो ॥
एवमेव तुवं राज चूकनीयस्स धीतरं,
कामगिद्धो न जानासि मच्छोव मरणमत्तनो ॥
सचे गच्छसि पञ्चालं खिप्पमत्तं जहिस्ससि,
मिगं यथानु पन्नं व महन्तं भय मेस्सति ॥"

[राजन्! आप जानते हैं कि चूकनी ब्रह्मदत्त महाबलशाली, महाप्रतापी राजा है। वह राजा आपको मतलब से ही वहाँ बुलाना चाहता है, जैसे शिकारी पालतू मृगी से लुभाकर मृग को। जैसे माँस का लोभी मच्छ माँस से ढके हुए काँटे को नहीं जानता है और मरण को प्राप्त होता है, उसी प्रकार हे राजन्! तू भी चूकनी की कन्या के वशीभूत हो अपनी मृत्यु को नहीं पहचानता है। यदि पञ्चाल जायगा तो शीघ्र ही विनाश को प्राप्त होगा, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार गाँव में आया हुआ मृग बड़े भय को प्राप्त होता है। तू भी बड़े भय को प्राप्त होगा।]

अति निन्दा करने से राजा को क्रोध आ गया। वह सोचने लगा—'यह मुझे अपने दास की तरह समझता है। यह समझता ही नहीं कि मैं राजा हूं। श्रेष्ठ राजा ने मेरे पास लड़की देने का समाचार भेजा है, सुनकर भी मंगल बात मुँह से नहीं निकालता है। मेरे बारे में कहता है कि यह मूर्ख मृग की तरह, काँटा निगल जाने वाले

च्छ की तरह, (मनुष्य) पथ पर आये हुए मृग की तरह मरण को प्राप्त होगा। उसने क्रोध के वशीभूत हो दूसरी गाथा कही—

"मयमेव बालम्हसे एकमूगा ये उत्तमत्थानि तपी लपिम्ह
किमेव त्वं नङ्गलकोटि बद्धो अत्थानि जानासि यथापि अञ्जे।"

[हम ही महामूर्ख हैं, जो ऐसी उत्तम बातों के बारे में तेरे साथ वार्तालाप करते हैं! हे हलके सिरे को पकड़कर बड़े हुए बच्चे! तू इन बातों को दूसरों के समान कहाँ समझता है?]

इस प्रकार उसे अपशब्द कह और उसका मजाक उड़ा, और यह सोच कि यह गृहपति-पुत्र मेरे मंगल-कृत्य में बाधक होता है उसे निकलवाने के लिये गाथा कही—

"इमं गले गहेत्वान नासेथ विजिता मप्न।
यो मे रतनलाभस्य अन्तरायाय भासति॥"

[यह मेरे (स्त्री) रत्न-लाभ में विघ्न डालने की बात करता है, इसे गर्दन पकड़कर मेरे देश से निकाल दो।]

राजा क्रोधित है, जान महोषध पण्डित ने सोचा—'यदि कोई राजा की बात मान मेरा गला या हाथ पकड़ ले तो फिर यह मेरे लिये जीवनभर लज्जित रहने के लिये पर्याप्त होगा। इसलिये स्वयं ही निकल जाऊँगा।' उसने राजा को प्रणाम किया और अपने घर चला गया। राजा भी केवल क्रोधाभिभूत होने के कारण ही ऐसा बोला, महोषध पण्डित के प्रति आदर होने से उसने किसी को ऐसा करने के लिए नहीं कहा। महोषध ने सोचा—'यह राजा मूर्ख है। अपना भला-बुरा नहीं जानता। कामुकता के वशीभूत हो—'उसकी लड़की अवश्य ही लूँगा' सोच, भावी भय को न जानने के कारण, वहाँ जाने से महाविनाश को प्राप्त होगा। मुझे उसके कहने का ख्याल नहीं करना चाहिये। यह मेरा बड़ा उपकारी है। उसने मुझे बहुत ऐश्वर्य दिया है। मुझे उसका सहायक होना चाहिये। पहले तोते के बच्चे को भेज, यथार्थ बात जान, पीछे स्वयं जाऊँगा', सोच उसने तोते के बच्चे को भेजा।

"मित्र हरित पक्ष! आ, मेरा काम कर। पञ्चालराज के

शयनागार में एक मैना रहती है। उससे एकान्त में पूछना। वह सब कुछ जानती है। वह उस राजा और केवट्ट ब्राह्मण की सब बातचीत जानती है।"

"हाँ", यह वचन दे वह तोता उस मैना के पास गया। मैना को सम्वोधित कर उसने कहा, "हे सुघरवासिनी, मधुर भाषिणी! तू सकुशल तो है? हे वैश्य वधु! तू स्वस्थ तो है? हे सुघरवासिनी! क्या तुझे मधु और खील मिलती है?"

"मित्र! मैं सकुशल हूं। मैं स्वस्थ हूं और हे तोते पण्डित! मुझे मधु के साथ खील मिलती है। मित्र! तू कहाँ से आया है? अथवा तुझे किसने भेजा है? इससे पहले मैंने तुझे देखा-सुना नहीं।"

उसकी बात सुन उसने सोचा—'यदि मैं कहूंगा कि मिथिला से आया हूं तो यह मर जायेगी पर मेरा विश्वास नहीं करेगी। इसलिये सिवि राजा द्वारा भेजा गया बन, वहाँ से आया हूं, यह मिथ्या बात कह दूँ। वह बोला—

"अहोसिं सिविराजस्स पासादे सयनपालको
ततो सो धम्मिको राजा बद्धं मोचोसि बन्धना॥"

[मैं सिविराज के प्रासाद में उसके शयनागार में था। उस धार्मिक राजा ने मुझे बन्धन से मुक्त कर दिया।]

तब उस मैना ने उसे अपने लिये सोने की तश्तरी में रखी हुई मधु मिश्रित खील और मधुर जल देकर पूछा, "मित्र! आप दूर से आये हैं। किस उद्देश्य से आये हैं?"

उसने झूठा उत्तर दिया—

"तस्स मेका दुतियासि सलिका मञ्जुमाणिका,
ते तत्थ अवधी सेनोपेक्खतो सुघरे ममं॥"

[मेरी एक प्रियभाषिणी भार्या मैना थी। उसे मेरे देखते-देखते अच्छे घर में बाज ने मार डाला।]

मैना ने पूछा, "तेरी भार्या को बाज ने कैसे मार डाला?"

"भद्रे! सुन। एक दिन हमारे राजा ने जल-क्रीड़ा के लिए जाते समय मुझे भी बुलाया। मैं भार्या-सहित उसके साथ गया, खेला

और सन्ध्या समय उसी के साथ लौट आया। फिर राजा के साथ ही प्रासाद पर चढ़ शरीर सुखाने के लिये हम दोनों झरोखे से निकल मीनार के गर्भ में बैठे। उसी समय एक बाज ने मीनार से निकलकर हम पर झपट्टा मारा। मैं मृत्यु के भय से तुरन्त भागा। वह उस समय गर्भिणी थी। इसलिये जल्दी से न भाग सकी। बाज मेरी नज़र के सामने ही उसे मारकर ले गया। मुझे शोक से रोता देख हमारे राजा ने पूछा, 'क्यों रोता है? सौम्य! मत रो! दूसरी भार्या खोज ले।' मैंने कहा,'देव! दूसरी आचारविहीन दुश्शील भार्या के लाने से क्या लाभ? अकेले ही विचरना अच्छा है।' तब राजा ने मुझे यह कहकर यहाँ भेजा है,'सौम्य! मैं एक सदाचारिणी मैना को जानता हूं। वह तेरी भार्या जैसी ही है। चूकनीराज के शयनागार में रहने वाली मैना ऐसी ही है। तू वहाँ जाकर उसका मन जान, उसे राजी कर। यदि वह अच्छी लगे तो हमें आकर बता। मैं या देवी वहाँ जाकर बड़े ठाठ-बाट से उसे ले आयेंगे।' मैं इसीलिये आया हूं।" उसने गाथा कही—

"तस्सा कामा हि सम्पत्तो आगतोस्मि तवन्ति के।
सचे करेय्यासि ओकासं उभयोव वसामसे॥"

[उसी इच्छा से प्रसन्न होकर मैं तेरे पास आया हूं। यदि तू अनुज्ञा करे तो हम इकट्ठे रहें।]

मैना उसकी बात सुन प्रसन्न हुई। किन्तु मन की बात छिपाकर अनिच्छा प्रकट करती हुई-सी बोली—

"सुवीच सुविं कामेय्य साकिको पन साकिकं।
सुवस्स साकिकाय च संवासो होति कीदिसो॥"

[तोता तोती को चाहे और मैना (पुं०) मैना (स्त्री) को चाहे यह तो स्वाभाविक है, किन्तु तोते और मैना का सहवास कैसा होगा?]

यह बात सुनी तो तोते ने सोचा—'यह इनकार नहीं करती है, केवल नखरा ही करती है। यह निश्चय से मुझे चाहेगी। मैं इसे नाना प्रकार की उपमाओं से विश्वास दिलाऊँगा।' उसने गाथा कही—

शयनागार में एक मैना रहती है। उससे एकान्त में पूछना। वह सब कुछ जानती है। वह उस राजा और केवट्ट ब्राह्मण की सब बातचीत जानती है।"

"हाँ", यह वचन दे वह तोता उस मैना के पास गया। मैना को सम्बोधित कर उसने कहा, "हे सुघरवासिनी, मधुर भाषिणी! तू सकुशल तो है? हे वैश्य वधु! तू स्वस्थ तो है? हे सुघरवासिनी! क्या तुझे मधु और खील मिलती है?"

"मित्र! मैं सकुशल हूं। मैं स्वस्थ हूं और हे तोते पण्डित! मुझे मधु के साथ खील मिलती है। मित्र! तू कहाँ से आया है? अथवा तुझे किसने भेजा है? इससे पहले मैंने तुझे देखा-सुना नहीं।"

उसकी बात सुन उसने सोचा—'यदि मैं कहूंगा कि मिथिला से आया हूं तो यह मर जायेगी पर मेरा विश्वास नहीं करेगी। इसलिये सिवि राजा द्वारा भेजा गया बन, वहाँ से आया हूं, यह मिथ्या बात कह दूँ। वह बोला—

"अहोसिं सिविराजस्स पासादे सयनपालको
ततो सो धम्मिको राजा बद्धे मोचोसि बन्धना॥"

[मैं सिविराज के प्रासाद में उसके शयनागार में था। उस धार्मिक राजा ने मुझे बन्धन से मुक्त कर दिया।]

तब उस मैना ने उसे अपने लिये सोने की तश्तरी में रखी हुई मधु मिश्रित खील और मधुर जल देकर पूछा, "मित्र! आप दूर से आये हैं। किस उद्देश्य से आये हैं?"

उसने झूठा उत्तर दिया—

"तस्स मेका दुतियासि सलिका मञ्जुमाणिका,
ते तत्थ अवधी सेनोपेक्खतो सुघरे ममं॥"

[मेरी एक प्रियभाषिणी भार्या मैना थी। उसे मेरे देखते-देखते अच्छे घर में बाज ने मार डाला।]

मैना ने पूछा, "तेरी भार्या को बाज ने कैसे मार डाला?"

"भद्रे! सुन। एक दिन हमारे राजा ने जल-क्रीड़ा के लिए जाते समय मुझे भी बुलाया। मैं भार्या-सहित उसके साथ गया, खेला

और सन्ध्या समय उसी के साथ लौट आया। फिर राजा के साथ ही प्रासाद पर चढ़ शरीर सुखाने के लिये हम दोनों झरोखे से निकल मीनार के गर्भ में बैठे। उसी समय एक बाज ने मीनार से निकलकर हम पर झपट्टा मारा। मैं मृत्यु के भय से तुरन्त भागा। वह उस समय गर्भिणी थी। इसलिये जल्दी से न भाग सकी। बाज मेरी नज़र के सामने ही उसे मारकर ले गया। मुझे शोक से रोता देख हमारे राजा ने पूछा, 'क्यों रोता है ? सौम्य ! मत रो ! दूसरी भार्या खोज ले।' मैंने कहा,'देव! दूसरी आचारविहीन दुश्शील भार्या के लाने से क्या लाभ ? अकेले ही विचरना अच्छा है।' तब राजा ने मुझे यह कहकर यहाँ भेजा है,'सौम्य! मैं एक सदाचारिणी मैना को जानता हूं। वह तेरी भार्या जैसी ही है। चूकनीराज के शयनागार में रहने वाली मैना ऐसी ही है। तू वहाँ जाकर उसका मन जान, उसे राजी कर। यदि वह अच्छी लगे तो हमें आकर बता। मैं या देवी वहाँ जाकर बड़े ठाठ-बाट से उसे ले आयेंगे।' मैं इसीलिये आया हूं।'' उसने गाथा कही—

"तस्सा कामा हि सम्पत्तो आगतोस्मि तवन्ति के।
सचे करेय्यासि ओकासं उभयोव वसामसे॥"

[उसी इच्छा से प्रसन्न होकर मैं तेरे पास आया हूं। यदि तू अनुज्ञा करे तो हम इकट्ठे रहें।]

मैना उसकी बात सुन प्रसन्न हुई। किन्तु मन की बात छिपाकर अनिच्छा प्रकट करती हुई-सी बोली—

"सुवीच सुविं कामेय्य साकिको पन साकिकं।
सुवस्स साकिकाय च संवासो होति कीदिसो॥"

[तोता तोती को चाहे और मैना (पुं०) मैना (स्त्री) को चाहे यह तो स्वाभाविक है, किन्तु तोते और मैना का सहवास कैसा होगा ?]

यह बात सुनी तो तोते ने सोचा—'यह इनकार नहीं करती है, केवल नखरा ही करती है। यह निश्चय से मुझे चाहेगी। मैं इसे नाना प्रकार की उपमाओं से विश्वास दिलाऊँगा।' उसने गाथा कही—

"यं यं कामी कामयति अपि चण्डालिका मपि।
सब्बेहि सदिसो होति नत्थि कामे असादिसो ॥"

[कामुक जिस-जिस की भी कामना करता है, भले ही वह चण्डालिनी हो, सभी सदृश ही होती हैं। कामभोग में कहीं कुछ असादृश्य नहीं है।]

यह कह मनुष्यों में नाना जातियों का परस्पर सहवास दिखाने के लिये बाद की गाथा कही—

"अत्थि जम्बावती नाम माता सिब्बिस्स राजिनो।
सा भरिया वासुदेवस्स कण्हस्स महेसी सिया ॥"

[सिवि राजा की माता जम्बावती नाम की (चण्डालिनी) है। वह कृष्णायन (गोत्र) के (दस भाइयों में बड़े भाई) वासुदेव की प्रिय भार्या हुई।]

यह उदाहरण देकर उसने दिखाया कि इस प्रकार के क्षत्रिय ने भी चण्डालिनी से सहवास किया। हम जानवरों के बारे में क्या कहना? परस्पर सहवास का अच्छा लगना ही निर्णायक है। और भी उदाहरण देकर कहा—

"रथावती किम्पुरिसी सापि वच्छं अकामपि।
मनुस्सो मिगिया सद्धिं नत्थि कामे असादिसो।"

[रथावती किन्नरी ने भी वच्छ तपस्वी की कामना की। मनुष्य ने मृगी के साथ भी सहवास किया। कामभोग में असादृश्य नहीं है।]

उसकी बात सुन वह बोली, "स्वामी! चित्त सदैव एक-जैसा नहीं रहता। मुझे प्रिय के वियोग से डर लगता है।" तोता पण्डित था। स्त्री-माया में कुशल था। उसने उसकी परीक्षा लेते हुए फिर गाथा कही—

"हन्द खोहं गमिस्सामि सालिके मञ्जु भाषिके।
पच्चक्खानुपदं हेतं अति मञ्जसि नून मं ॥"

[हे प्रियभाषिणी मैना! मैं जाता हूं, तेरा यह इनकार ही है। 'यह मुझे चाहता है', समझ तू बहुत मान कर रही है।]

ज्योंही उसने सुना कि 'जाता हूं', उसका हृदय टूट गया। उसे देखते ही मानो उसके मन में कामबासना की जलन पैदा हो गयी थी। उसने डेढ़ गाथा कही—

"न सिरी तरमानस्स माढर सुवपण्डित
इधेव ताप अच्छस्सु याव राजानं दक्खति
सोस्ससि सद्दं मुदिङ्गानं आनुभावञ्च राजिनो॥"

[हे माढर तोते पण्डित! जल्दबाज को लक्ष्मी नहीं मिलती। जब तक राजा से भेंट नहीं होती तब तक यहीं रह। यहाँ मृदङ्ग आदि का शब्द सुनने को मिलेगा और राजा का प्रताप देखने को मिलेगा।]

शाम दोनों ने मैथुन-धर्म सेवन किया। हर तरह से परस्पर अत्यन्त प्रिय हो गये। तब तोते के बच्चे ने सोचा—'अब यह मुझसे रहस्य नहीं छिपायेगी। अब इससे पूछकर जाना चाहिये।'

वह बोला, "मैना!"

"स्वामी, क्या?"

"मैं तुझसे कुछ कहना चाहता हूं।"

"स्वामी, कहें।"

"आज हमारा मंगल दिवस है। दूसरे दिन कहूंगा।"

"स्वामी, यदि मंगल बात है तो कहें, यदि अमांगलिक है तो मत कहें।"

"यह तो मंगल कथा ही है।"

"तो स्वामी कहें!"

"यदि सुनना चाहती है तो तुझे कहता हूं", कह उस रहस्य को पूछने के लिये डेढ़ गाथा कही—

"यो नुखो यं तिब्बो सद्दो तिरोजन पदे सुतो
धीता पंचाल राजस्स ओसधी विय वण्णिनी।
तं दस्सति विदेहानं सो विवाहो भविस्सति॥"

[इसके दूसरे जनपदों में यह ज़ोर का हल्ला सुना जाता है कि

ओसधी तारे की तरह प्रकाशयुक्त वर्ण वाली, पञ्चाल राजकन्या विदेहों को दी जायगी और वह विवाह होगा।]

तोते की बात सुन वह बोली, "स्वामी! मंगल दिन में अमांगलिक बात मुँह से क्यों निकालते हो?"

"मैं मंगल बात कहता हूं। तू अमांगलिक कहती है। यह क्या बात है?"

"स्वामी, शत्रुओं को भी ऐसी मंगल क्रिया न हो।"

"तो भद्रे! बता।"

"स्वामी! नहीं कह सकती।"

"भद्रे! यदि तू मुझसे कोई रहस्य छिपाएगी तो इसी दिन से हमारा सहवास नहीं होगा।"

तोते के दबाव डालने पर वह बोली, "तो स्वामी सुनें—

ने दिसो ते अमित्तानं विवाहो होतु माढर।
यथा पञ्चाल राजस्स वेदेहेन भविस्सति॥"

[माढर! तेरे शत्रुओं का भी ऐसा विवाह न हो, जैसा पञ्चाल राजकन्या तथा विदेह का होगा।]

इस गाथा के कहने पर जब उसने पूछा, "भद्रे! ऐसी बात क्यों कहती है?" तो मैना ने कहा, "विदेह को यहाँ बुलाकर पञ्चालों का राजा उसे मरवा डालेगा। उनकी मैत्री नहीं होगी।"

इस प्रकार उस मैना ने तोते पण्डित को सारा रहस्य बता दिया। तोते ने केवट्ट की प्रशंसा की, "आचार्य केवट्ट उपाय-कुशल है। इसमें आश्चर्य नहीं कि ऐसे उपाय से वह विदेहराज को मरवा डाले। इस प्रकार की अमांगलिक बात से हमें क्या लेना-देना!"

यह जान कि उसके आने का उद्देश्य पूरा हो गया, उसने रात उसके साथ बिना विदा होने की इच्छा से कहा, "भद्रे! मैं सिवि राष्ट्र जाकर राजा से कहूंगा कि मुझे श्रेष्ठ भार्या मिल गयी। मुझे सात रातभर के लिये अनुज्ञा दे। मैं जाकर सिविराज की पटरानी से कह आऊँ कि मुझे मैना के साथ रहना मिल गया है।"

मैना की इच्छा नहीं थी कि उससे वियोग हो किन्तु उसकी बात

सुन उसका विरोध न कर सकने के कारण उसने आगे की गाथा कही—

"हन्द खो तं अनुजानामि रत्तियो सत्तमत्तियो,
सचे त्वं सत्तरत्तेन नागच्छसि ममन्ति के।
मञ्जे ओक्कन्त सत्तं मे मलाप आगमिस्ससि॥"

[मैं तुझे सात रात की छुट्टी देती हूं। यदि तू सात रात के बाद मेरे पास नहीं आयेगा तो मैं समझती हूं कि मेरा प्राण निकलने पर, मेरे मरने पर आयगा।]

तोते ने दिल में सोचा—'चाहे तू जी और चाहे मर, मुझे इससे क्या!' फिर बोला, "भद्रे! क्या कहती है! मैं भी यदि आठवें दिन तुझे न देख पाऊँगा तो कैसे जीता रहूंगा!"

वह वहाँ से उड़ा और थोड़ी दूर सिविराष्ट्र की ओर जा, रुककर मिथिला पहुँचा और महोषध के कन्धे पर उतरा।

15

महोषध पण्डित ने उसे ऊपर महल पर ले जाकर पूछा। तोते ने सारा हाल सुना दिया। पण्डित ने भी पहले की तरह उसका सत्कार किया।

यह बात सुन महोषध पण्डित को विचार आया—'मेरी सम्मति न रहने पर भी राजा जायगा। जाएगा तो महान् विनाश को प्राप्त होगा। तब मेरी ही निन्दा होगी—ऐसे ऐश्वर्यदाता की बात को जानकर भी उसकी रक्षा नहीं की। मेरे-जैसे पण्डित के रहते यह क्यों नष्ट होगा? यह मेरी जिम्मेदारी है कि मैं राजा से भी पहले जाऊँ, चूकनी से भी भेंट करूँ और भलो प्रकार विदेह-नरेश के रहने के लिये नगर का निर्माण करवा, गव्यूतिमात्र चलने योग्य सुरंग और आधे योजन की बड़ी सुरंग बनवाऊँ और इस प्रकार चूकनी राजा की कन्या को अपने राजा की चरण-सेविका बनाऊँ और अट्ठारह अक्षौहिणी सेना तथा सौ राजाओं के घेरकर खड़े रहते हुए भी अपने

राजा को राहु के मुँह से चन्द्रमा को छुड़ा लाने की तरह छुड़ाकर ले आऊँ।'

इस प्रकार विचार करते-करते उसका मन प्रीति से भर गया। उसने प्रसन्नता के आवेश में प्रीति-वाक्य कहे—

"यस्सेव घरे भुञ्जेय्य भोगं तस्सेव अत्थं पुरिसो चेरय्य।"

[आदमी को चाहिये कि जिसके घर में रहकर भोगों का भोग करे, उसी का हित करे।]

उसने स्नान किया और अलंकृत हो बड़े ठाठ-बाट से राजकुल में जा, राजा को प्रणाम कर एक ओर खड़े हो पूछा, "देव! क्या आप उत्तर पञ्चाल नगर अवश्य ही जाएँगे?"

"हाँ, तात! यदि मुझे पञ्चाल चण्डी नहीं मिलती तो मुझे राज्य से क्या लाभ? मुझे मत छोड़। मेरे साथ ही चल। वहाँ जाने से हमारे दो प्रयोजन सिद्ध होंगे। पहला, स्त्री-रत्न प्राप्त होगा और दूसरे, राजा के साथ मैत्री स्थापित होगी।"

"तो देव! मैं पहले जाकर आपके लिए निवास-स्थान बनवाऊँगा। जब मैं सूचना भिजवाऊँ, तभी आप आइयेगा।"

यह सुनकर राजा प्रसन्न हुआ कि पण्डित मुझे छोड़ नहीं रहा है। बोला, "तात! आगे जाते समय तुम्हें किस चीज़ की आवश्यकता है?"

"देव! सेना।"

"तात! जितनी चाहिये उतनी ले जा।"

"देव! चारों जेलखानों के द्वार खुलवा, चोरों की हथकड़ियाँ-बेड़ियाँ कटवा, उन्हें भी मेरे साथ भेजें।"

"तात! जैसा चाहे वैसा कर।"

महोषध पण्डित ने जेलखाने के द्वार खुलवाये; वहाँ से शूर, योद्धा और ऐसे ही आदमी—जो जहाँ जायँ वहाँ कार्य सफल करें—निकलवाये और उन्हें कहा, "मेरी सेवा करो।"

फिर उनका सत्कार करवाया। बढ़ई, लोहार, चमार, चित्रकार आदि नाना प्रकार के शिल्पियों की अठारह श्रेणियाँ लीं। बसूला,

कुल्हाड़ी, कुदाल, खंती आदि बहुत से औज़ार लिये। इस प्रकार वह बहुत-सी सेना ले नगर से निकला।

उसने पञ्चालराज के सुन्दर नगर जाते समय योजन-योजन की दूरी पर एक-एक गाँव में एक-एक अमात्य को बसाकर कहा, "जब राजा पञ्चाल चण्डी को लेकर वापिस लौटे तो हाथी, घोड़ों तथा रथों को तैयार राजा को ले शत्रुओं से बच यथाशीघ्र मिथिला पहुँच जाना।"

उसने गंगा-तट पर पहुँच आनन्दकुमार को बुलवाकर कहा, "आनन्द! तू तीन सौ बढ़इयों को लेकर गंगा के ऊपर जा और अच्छी लकड़ी कटवा तीन सौ नौकाएँ बनवा, और नगर-निर्माण के लिये वहीं शहतीर आदि छिलवा, हलकी लकड़ी से नौकाएँ भर शीघ्र आ।"

किन्तु वह स्वयं गंगा के उस पार जा, जहाँ उतरा वहाँ से कदमों से ही गिनती कर निश्चय किया कि यह आधी योजन जगह है, यहाँ बड़ी सुरंग बनेगी। यहाँ हमारे राजा का निवास-नगर बनेगा। यहाँ से राजगृह तक गव्यूति-मात्र चलने योग्य सुरंग बनेगी। इस प्रकार निर्णय कर उसने नगर में प्रवेश किया। चूकनी राजा को जब महोषध पण्डित के आने की ख़बर मिली तो उसने सोचा—'अब मेरा मनोरथ सिद्ध होगा। शत्रुओं का विनाश देख सकूँगा। यह आ गया है तो विदेहराज भी शीघ्र ही आयगा।' उसे यह सोच बहुत ही आनन्द हुआ कि दोनों को मारकर समस्त जम्बू द्वीप का राजा बनूँगा। सारे नगर में हलचल मच गई—'यह वही महोषध पण्डित है, जिसने सौ राजाओं को ऐसे ही भगा दिया था जैसे ढेले से कौवे।' नागरिक जब उसके सौन्दर्य को निहार रहे थे तभी महोषध पण्डित राजद्वार पर पहुँचा और रथ से उतर राजा के पास सूचना भिजवाई। जब कहा गया कि आएँ, तो महल में प्रविष्ट हो राजा को प्रणाम कर एक ओर खड़ा हो गया। राजा ने उसका कुशल-क्षेम पूछ प्रश्न किया, "तात! राजा कब आएगा?"

"देव! जब मैं सूचना भिजवाऊँगा।"

"तू किसलिये आया है ?"

"देव ! अपने राजा के लिये निवासस्थान बनवाने को।"

"तात ! अच्छा।"

राजा ने उसकी सेना को खर्चा दिलवा, महोषध पण्डित का भी बहुत सत्कार करा निवासस्थान दिलवाकर कहा, "जब तक तुम्हारा राजा आता है, तब तक उत्कण्ठा-रहित होकर जो कुछ हमारे हित में हो वह भी करते रहो।"

राजभवन में चढ़ते समय ही सीढ़ियों के नीचे खड़े हो उसने निश्चय कर लिया था कि इस जगह सुरंग होगी। उसके मन में विचार आया—'राजा कहता है कि हमारे हित में भी जो हो सो करो। ऐसा करना चाहिए कि सुरंग खोदते समय, इन सीढ़ियों पर कोई भी न चढ़े।' उसने राजा से कहा, "देव ! मैंने महल में प्रवेश करते समय ही सीढ़ियों के नीचे खड़े हो इनकी बनावट में दोष देखा है। यदि आपको अच्छा लगे और लकड़ियाँ मिलें तो मैं इसे ठीक से बनवा दूँ।"

"तात ! अच्छा ! बनवा।"

उसने 'यहाँ सुरंग-द्वार होगा', निश्चय कर उस सीढ़ी को वहाँ से हटा, जहाँ सुरंग-द्वार बनेगा वहाँ बालू न गिरने देने के लिये पटरा लगवा उसे ऐसा स्थिर कर कि गिरे नहीं, सीढ़ी बनवाई। राजा उस भेद को न समझ सका। उसने तो यही सोचा कि मेरे स्नेह से करता है। इस प्रकार वह दिन मरम्मत ही में बिता अगले दिन महोषध ने कहा, "देव ! यदि ज्ञात हो जाय कि हमारा राजा कहाँ रहेगा, तो उस जगह को हम ठीक-ठाक करा लें।"

"अच्छा पण्डित ! मेरे निवासस्थान के अतिरिक्त नगर में जो स्थान भी सबसे अच्छा लगे वही ग्रहण कर।"

"महाराज ! हम अतिथि हैं। आपके बहुत से प्रिय योद्धा हैं। उनके घर लिये जायेंगे तो वे हमारे साथ युद्ध करेंगे। उनके साथ हम झगड़ेंगे ?"

"पण्डित ! उनके कहने की चिन्ता न कर। जो स्थान तुझे अच्छा लगे, ले।"

"देव ! बार-बार वे आपको कहेंगे, उससे आपके चित्त को शान्ति नहीं मिलेगी। यदि आप चाहें तो आप ऐसा कर सकते हैं कि जब तक हम घर लें तब तक हमारे ही आदमी द्वारपाल रहें। तब वे प्रवेश न पा लौट जायेंगे। ऐसा होने से आपको और हमको भी चित्त-सुख होगा।"

राजा ने 'अच्छा' कह स्वीकार कर लिया। महोषध पण्डित ने सीढ़ी के नीचे, सीढ़ी के ऊपर, बड़े दरवाज़े पर—सभी जगह अपने ही आदमी नियुक्त कर दिये और उन्हें आज्ञा दी, "किसी को भी अन्दर न आने दो।"

तब पण्डित ने अपने आदमियों को कहा, "राजमाता का घर गिराने का ढंग बनाओ।"

उन्होंने ड्योढ़ी और बरामदे से ईंटें तथा मिट्टी गिरानी शुरू की। राजमाता ने यह समाचार सुना तो आकर पूछा, "तात ! मेरा घर क्यों फोड़ रहे हो ?"

"महोषध पण्डित इसे गिरवाकर अपने राजा के लिये भवन बनवाना चाहता है।"

"यदि ऐसा है तो यहीं रहो।"

"हमारे राजा की सेना सवारी बहुत है। यह पर्याप्त नहीं है। दूसरा बनवायेंगे।"

"तुम मुझे नहीं पहचानते। मैं राजमाता हूं। अभी पुत्र के पास जाकर सूचना दूँगी।"

"हम राजा के कहने से तुड़वा रहे हैं। यदि रुकवा सके तो रुकवा !"

उसे क्रोध आया। 'अभी दण्ड की व्यवस्था करती हूं' सोच राज-द्वार पर गई। उसे रोका गया, "अन्दर प्रवेश मत कर।"

"तात ! मैं राजमाता हूं।"

"हम यह जानते हैं। किन्तु हमें राजा की आज्ञा है कि किसी को भी घुसने मत दो। तू जा।"

तब उसने देखा कि उसे जो चाहिये वह नहीं मिलता तो रुककर खड़ी हो अपने घर को देखने लगी। तब एक ने उसे उठाकर, गर्दन से पकड़कर ज़मीन पर गिरा दिया।

"यहाँ क्या करती है ? जाती है या नहीं ?"

उसने सोचा—'राजा की ही आज्ञा होगी अन्यथा ये ऐसा न कर सकते। मैं पण्डित के ही पास जाऊँगी।'

जाकर बोली, "तात महोषध ! मेरा घर क्यों तुड़वा रहा है ?"

"देवी, क्या कहती है ?" पास खड़े एक आदमी ने पूछा।

"तात ! पण्डित मेरा घर क्यों उजड़वा रहा है ?"

"विदेह राजा का निवासस्थान बनवाने को।"

"क्या वह यह मानता है कि इतने बड़े नगर में अन्यत्र स्थान नहीं मिलता है ? यह लाख की रिश्वत लेकर अन्यत्र बनवा ले।"

"अच्छा देवी, आपका घर छोड़ देंगे।"

"लेकिन रिश्वत की बात किसी और से न कहना, नहीं तो दूसरे लोग भी कहेंगे—'रिश्वत ले लो, हमारा घर छोड़ दो।' "

"देवी ! तुम भी किसी से मत कहना।"

"तात ! मेरे लिये भी यह लज्जा की ही बात है कि राजमाता ने रिश्वत दी। मैं किसी को नहीं कहूंगी।"

पण्डित ने 'अच्छा' कहा और लाख की रिश्वत ले केवट्ट के घर पहुँचा। तब उसने भी इच्छापूर्ति होते न देख लाख की रिश्वत ही दी। इस प्रकार सारे नगर के घरों को लेकर उनसे रिश्वत लेने से नौ करोड़ कार्षापण इकट्ठे हो गये। पण्डित सारे नगर में घूम राजकुल पहुँचा। राजा ने पूछा, "पण्डित ! क्या निवासस्थान मिला ?"

"महाराज ! ऐसा कोई है जो न दे ? किन्तु घर देने में उन्हें कष्ट होता है। हमारे लिये भी योग्य नहीं है कि हम उनकी प्रिय

पण्डित के आने के समय से अच्छा पानी पीने को नहीं मिलता। गंगा मटमैली हो बहती है। क्या कारण है?"

पण्डित के नियुक्त आदमी समाधान करते, "महोषध के हाथी नदी में क्रीड़ा करते हैं। वे पानी में कीचड़ कर देते हैं। इसी से नदी मटमैली बहती है।"

सात सौ आदमी चलने की सुरंग खनने लगे। मशकों आदि से मिट्टी ले जाकर उस नगर में गिराते। जितनी मिट्टी गिराई जाती उसमें पानी मिला, चारदीवारी चुनते जाते, अथवा दूसरे काम करते। बड़ी सुरंग का प्रवेशद्वार नगर में था। उसमें अठारह हाथ ऊँचा यन्त्र-द्वार लगा हुआ था। एक आणि के खींच लेने से द्वार खुल जाता, और दूसरी के खींच लेने से द्वार बन्द हो जाता। बड़ी सुरंग के दोनों ओर चिनाई कराकर चूने का पलस्तर करवाया। ऊपर तख्तों की छत बनवा, दिखाई देने के स्थान पर मिट्टी का लेप करवा सफेदी करवा दी। कुल मिलाकर अस्सी बड़े दरवाज़े और चौंसठ छोटे दरवाज़े बने। सभी यन्त्र-युक्त। एक आणि के खींचते ही सब बन्द हो जाते, एक के खींचने से सब खुल जाते। दोनों तरफ सैकड़ों दीपों के आले थे। वे भी यन्त्र-युक्त। एक के खोलने पर सभी खुल जाते, एक बन्द कर देने पर सभी बन्द हो जाते। दोनों ओर एक सौ क्षत्रियों के लिये एक सौ सोने के कमरे थे। एक-एक में नाना वर्ग के बिछौने बिछे थे। किसी-किसी में श्वेत छत्र सहित महान् शैया थी। किसी-किसी में सिंहासन सहित महान् शैया थी। किसी-किसी में सुन्दर स्त्री-मूर्ति थी, बिना हाथ से छुए यह पता ही न लगे कि यह मनुष्य नहीं है। सुरंग की दोनों दीवारों में चतुर चित्रकारों ने नाना प्रकार के चित्र बनाये। उन्होंने शक्तलीला, सिनेऊ (पर्वत), परिण्ड सागर, महासागर, चातुर्महाद्वीप, हिमालय, अनोतप्त मनोशिलातल, चन्द्र, सूर्य, चातुर्महाराजिक देव, छः काम-स्वर्ग आदि सभी चीज़ें सुरंग में दिखाईं। पृथ्वी पर चाँदी-वर्ण बालुका बिखेर उस पर दर्शनीय कमल दिखाये। दोनों ओर नाना प्रकार की दूकानें भी दिखाईं। जहाँ-तहाँ सुगन्धित मालाएँ तथा

पुष्प-मालाएँ लटका, 'सुधर्मा' नामक देव-सभा की तरह सुरंग को सजा दिया।

उधर आनन्दकुमार ने तीन सौ बढ़इयों के साथ तीन सौ नौकाएँ बनवा, इमारती सामान से भर, गंगा से लाकर पण्डित को सूचना दी। उसने उन्हें नगर के काम में ले—'जब मैं आज्ञा करूँ तब लाना' कह नौकाओं को गुप्त स्थान पर रखवा दिया। नगर में पानी की खाई, अठारह हाथ ऊँची चारदीवारी, गोपुर, अट्टालिका, राजभवन आदि भवन, हस्तिशाला आदि और पुष्करिणियाँ—सभी कुछ बनकर तैयार हो गया। बड़ी सुरंग, चलने की सुरंग, नगर—ये सब कुछ चार महीने में बनकर समाप्त हो गया। तब महोषध पण्डित ने आने के लिये विदेहराज के पास दूत भेजा।

दूत का कहना सुन प्रसन्न हो विदेह राजा बहुत से अनुयायियों और चतुरंगिनी सेना को लेकर, अनन्त सेना वाले समृद्धिशाली काम्पिल्य नगर को देखने गया।

वह क्रमशः गंगा के तट पर पहुँचा। महोषध पण्डित ने अगवानी की और राजा को नवनिर्मित नगर में ले गया। राजा ने वहाँ श्रेष्ठ प्रासाद में रह, नाना प्रकार के श्रेष्ठ भोजन खा, थोड़ा विश्राम कर, शाम को अपने आगमन की सूचना देने के लिये पञ्चालराज के पास दूत भेजा।

दूत ने पञ्चालराज को सूचना दी, "महाराज! विदेहराज ने यह कहला भेजा है—'महाराज! आपके चरणों की वन्दना करने के लिये आ गया हूं। अब मुझे सर्वांग सुन्दर नारी भार्या के रूप में दें, जो स्वर्ण से ढकी हो और जिसके साथ दासियाँ हों।"

16

दूत की बात सुन चूकनीराज को प्रसन्नता हुई। उसने सोचा—'अब मेरा शत्रु कहाँ जायगा? दोनों के ही सिर काटकर जयपान करूँगा।' उसने क्रोध से उत्पन्न प्रसन्नता को प्रकट करते हुए दूत का सत्कार कर कहा—

"स्वागतं ते वेदेह अथो ते अदुरागतं,
नक्खत्तञ्ञेव परिपुच्छ अहं कञ्ञं ददामि ते।
सुवण्णेन पटिच्छन्नं दासीगण पुरक्खतं ॥"

[हे वेदेह ! तुम्हारा स्वागत है। तुम्हारा आगमन शुभ है। नक्षत्र पूछ, मैं तुझे दासियों सहित, स्वर्णाच्छादित कन्या दूँगा।]

यह सुन दूत ने विदेह-नरेश के पास जा सूचना दी, "देव ! मंगल कृत्य के लिये योग्य नक्षत्र जानें। राजा तुम्हें कन्या देंगे।"

राजा ने दुबारा दूत से यह कहला भेजा, "आज ही योग्य नक्षत्र है।"

चूकनीराज ने, 'अब भेजता हूं, अब भेजता हूं' झूठ बोलते हुए एक सौ राजाओं को संकेत किया—'अट्ठारह अक्षौहिणी सेना के साथ सभी युद्ध करने के लिये तैयार हो निकलेंगे। दोनों शत्रुओं का सिर काटकर जयपान करेंगे।' वे सभी निकल पड़े। राजा ने युद्ध के लिये निकलते समय माता तलताल देवी को, पटरानी नन्दा देवी को, पुत्र पञ्चालचण्ड को और पुत्री पञ्चालचण्डी को महल में ही रहने दिया।

महोषध पण्डित ने चूकनी-नरेश और उसके साथ आई सेना का बड़ा सत्कार किया। कुछ लोग सुरापान करते थे। कुछ मत्स्य-माँस आदि खाते थे। कुछ दूर से चलकर आने के कारण थकावट के मारे सोते थे। विदेह राजा, सेनक आदि पण्डितों को ले, अमात्य-गणों से घिरा हुआ अलंकृत महाप्रासाद के ऊपर बैठा था। चूकनी राजा भी अट्ठारह अक्षौहिणी सेना को ले नगर को 'तीन जोड़ों तथा चार संक्षेपों' से घेरकर सैकड़ों-हजारों मशालें लिये, सूर्योदय करता हुआ-सा, बड़ी तैयारी किये खड़ा था।

यह जान महोषध पण्डित ने अपने तीन सौ योद्धाओं को कहा, "तुम चलने की सुरंग से जाकर, राजा की माँ, पटरानी, पुत्र और पुत्री को चलने की सुरंग से लाकर, महासुरंग से ले जाकर, सुरंगद्वार से बाहर न निकाल, जब तक हमारा आगमन न हो, तब तक सुरंग

के अन्दर ही उन्हें रखे रह, हमारे आगमन के समय सुरंग से निकाल, सुरंग के दरवाज़े पर, महान् विशाल तल्ले पर बिठाना।"

योद्धाओं ने उसका कहना स्वीकार किया और चलने की सुरंग से जा, सीढ़ियों की जड़ में रखे हुए तख्तों को निकाला। फिर सीढ़ियों के नीचे, सीढ़ियों के ऊपर और महान् तल्ले पर पहरा देने वालों के हाथ-पैर बाँध, मुँह बन्द कर दिये, और उन्हें जहाँ-तहाँ छिपी जगहों में रख दिया। तब राजा के लिये तैयार खाद्य-सामग्री में से कुछ खा, कुछ चूर्ण-विचूर्ण कर प्रासाद के ऊपर चढ़े।

उस समय तलताल देवी यह सोच कि कौन जाने कब क्या होगा, नन्दा देवी को राजपुत्र तथा राजपुत्री को अपने पास, एक ही शैया पर सुलाती थी। उन योद्धाओं ने कमरे के बीच में खड़े होकर आवाज़ दी। राजमाता ने निकलकर पूछा, "तात ! क्या है ?"

"देवी ! हमारे राजा ने विदेह नरेश को तथा महोषध को जान से मार डाला है; और सारे जम्बूद्वीप का एकछत्र राजा हो गया है। उसने सौ राजाओं के मध्य बैठ बड़े ठाठ-बाट से महापान पीते हुए हमें भेजा है कि आप चारों को लेकर आएँ।"

वे महल से उतर सीढ़ियों के नीचे पहुँचे। फिर चलने की सुरंग में पहुँचे। सुरंग में पहुँच राजमाता ने पूछा, "हमें यहाँ रहते इतना समय हो गया, हमने यह गली कभी नहीं देखी।"

"इस गली में सदैव नहीं उतरा जाता। इस गली का नाम मंगल गली है। आज मंगल दिवस होने से राजा ने इस गली से आने की आज्ञा दी है।"

योद्धाओं का उन्होंने विश्वास कर लिया। कुछ योद्धा उन चारों को लेकर आगे चले। कुछ रुके और राजभवन का रत्नगृह खोल यथेष्ट मूल्यवान धन लेकर आए। उन चारों जनों ने जब आगे बड़ी सुरंग को देव-सभा की तरह अलंकृत देखा तो सोचा, राजा के लिये सजाई गई होगी। योद्धा उन्हें महागंगा के पास ले गये। वहाँ सुरंग के अन्दर ही सजे भवन में उन्हें बिठा, कुछ पहरा देने लगे और कुछ उनके ले आने को महोषध पण्डित को सूचना देने गये।

पण्डित ने उनकी बात सुनी तो प्रसन्न हुआ। सोचा, अब मेरा मनोरथ पूरा होगा। वह राजा के पास जा एक ओर खड़ा हुआ। राजा भी कामुकता के वशीभूत हुआ 'अब वह लड़की भेजता है, अब वह लड़की भेजता है' सोचता हुआ पलंग से उठ खिड़की के पास जा खड़ा हुआ। उसने जब लाखों मशालों से प्रकाशित और भारी सेना से घिरा हुआ नगर देखा तो उसके मन में सन्देह हुआ। उसने सेनक आदि पण्डितों से मन्त्रणा करते हुए गाथा कही—

"हत्थी, अस्सा, रथापत्ती सेना तिट्ठन्ति वम्मिता।
उक्का पदित्ता झायन्ति किन्नु मञ्जन्ति पण्डिता॥"

[हाथी, घोड़े, रथ और कवच पहने पैदल सेना खड़ी है। प्रज्वलित मशालें जल रही हैं। हे पण्डित! इसका क्या अर्थ है?]

यह सुन सेनक बोला, "महाराज! चिन्ता न करें। आज बहुत मशालें दिखाई दे रही हैं। मालूम होता है कि चूकनीराज तुम्हें लड़की देने के लिये चला आ रहा है।"

पुक्कस ने कहा, "महाराज! तुम्हारा सत्कार करने के लिये सेना लेकर खड़ा होगा।"

इसी तरह जो जिसे अच्छा लगा, उसने वैसा कहा। राजा को जब ये आवाज़ें सुनाई देने लगीं कि 'अमुक स्थान पर सेना खड़ी हो', 'अमुक स्थान पर पहरेदार खड़े हों' तथा 'अप्रमादी रहो', तो उसको मरने का डर लगा। उसने महोषध पण्डित का मत जानने के लिये कहा, "तात! हाथी, घोड़े, रथ तथा कवच पहने पैदल सेना खड़ी है। प्रज्वलित मशालें जल रही हैं। हम क्या करें?"

यह सुन महोषध पण्डित ने सोचा—'इस अन्धे मूर्ख को थोड़ा डराकर, पीछे अपना बल दिखाकर सांत्वना दूँगा।' उसने कहा—

"रक्खति तं महाराज चूकनीयो महब्बतो।
पदुट्ठो ते चूकनीयो पातो तं घातयिस्सति।"

[महाराज! बलशाली चूकनी ने आपको घेर लिया है। दुष्ट चूकनी प्रातःकाल आपका घात कर देगा।]

यह सुन सभी को मृत्यु-भय लगा। राजा का कण्ठ सूख गया। मुँह से थूक गिरने लगा। शरीर जलने लगा। मृत्यु से भयभीत हो, रोते-पीटते दो गाथाएँ कहीं—

"उब्बेधते ये हृदयं मुखञ्च परिसुस्सति ।
निब्बुतिं नाधिगच्छामि अग्निदड्ढोव आतपे ।।
कम्मारानं यथा डक्का अन्तो झापति नो बहि ।
एवम्पि हृदयं यम्हं अन्तो झापत्ति नो बहि ।।"

[मेरा हृदय काँपता है। मुख सूखता है। जैसे आग से जले आदमी को धूप में शान्ति नहीं प्राप्त होती, उसी प्रकार मुझे चैन नहीं है। जैसे सुनारों की आग अन्दर से जलाती है, बाहर से नहीं, उसी प्रकार मेरा हृदय भी अन्दर से जल रहा है, बाहर से नहीं।]

महोषध पण्डित ने उसका रोना सुन—'यह मूर्ख, मेरी बात नहीं मानता' सोच, उसे थोड़ा और निग्रह करने के लिये कहा, "हे क्षत्रिय! तू प्रमत्त है। मन्त्रणा के अनुसार चलने वाला नहीं है। भिन्न मन्त्रणा के अनुसार चलने वाला है। अब वे मन्त्रणा देने वाले पण्डितजन ही तेरा त्राण करें। हितैषी अमात्य का कहना न मानकर हे राजन! अपने मजे में मस्त रहने के कारण आप जाल में फँसे मृग की भाँति हो गये। जैसे माँस से ढके कांटे को मछली निगल जाती है, उसी प्रकार हे राजन! आप चूकनीराज की कन्या की कामना के कारण अपनी मृत्यु को नहीं देखते हैं। यदि पञ्चालों के पास जायेंगे तो शीघ्र ही अपना आप गँवा देंगे। (मनुष्य) पथ में आये मृग की तरह बड़े भय को प्राप्त होंगे।"

"हे राजन! अनार्य पुरुष गोद में बैठे सर्प की तरह डसता है। बुद्धिमान आदमी को चाहिये कि उससे मैत्री न करे। दुष्ट आदमी की संगति का परिणाम दुख ही होता है। जिसे जाने कि यह सदाचारी है, बहुश्रुत है, बुद्धिमान आदमी को चाहिये कि उसी से मैत्री करे। सत्पुरुष की संगति का परिणाम सुख ही होता है।

"हे राजन! आप वज्रमूर्ख हैं कि आपने मुझसे ऐसी ऊँची दर्जे की बातें कीं, मैं हल की मूठ पकड़ने वाला, औरों की तरह ऊँची-

ऊँची बातों को कैसे समझ सकता हूं। मुझे गर्दन से पकड़ मेरे ही देश से निकाल दें, जो मैं आपके स्त्री-रत्न लाभ में विघ्न डालने वाली बात कहता हूं।

"महाराज ! मैं किसान का लड़का हूं। आपके सेनक आदि दूसरे पण्डित जैसी बातें समझते हैं, वैसी मैं कैसे समझ सकता हूं ? मैं तो गृहस्थ का शिल्प ही जानता हूं। ऐसी बातें तो सेनकादि ही समझते हैं। वे पण्डित हैं। आज अठारह अक्षौहिणी सेना से घिरे होने की हालत में ये ही आपको बचाएँगे। मुझे तो गर्दन पकड़वाकर निकालने की आज्ञा दे दी थी। अब क्या होगा और क्या नहीं होगा मुझसे क्या पूछते हैं ?"

इस प्रकार उसका निग्रह किया। यह सुन राजा ने सोचा—'महोषध मेरे ही दोष कह रहा है। इसने पहले ही भावी पथ देख लिया होगा। इसीलिए मेरा अत्यन्त निग्रह कर रहा है। किन्तु यह इतने समय तक निकम्मा नहीं रहा होगा। इसने अवश्य ही मेरी सुरक्षा की व्यवस्था की होगी।'

उससे अनुरोध कर राजा ने कहा, "हे महोषध ! पण्डित-जन भूतकाल की बात को लेकर वचन से नहीं बींधते हैं। घोड़े की तरह बँधे हुए मुझको तू कोड़ों से क्यों मार रहा है ? यदि मुक्ति का मार्ग दिखाई देता है, यदि कल्याण दिखाई देता है तो मुझे वही बता। पुरानी बात लेकर अब वाणी से क्यों पीटता है ?"

तब महोषध पण्डित ने सोचा—'यह राजा बहुत अन्धा और मूर्ख है, परुष-विशेष को भी नहीं पहचानता है। इसे थोड़ा तंग करके, बाद में इसकी सहायता करूँगा।' उसने कहा—

"अतीतं मानुसं कम्मं दुक्करं दुरभिसम्भवं।
न तं सक्कोसि मोचेतुं त्वम्पि जानस्सु खत्तिय॥
सन्ति वेहासया नागा इद्धिमन्तो यसस्सिनो।
ते पि आदाय गच्छेय्युं यस्स होन्ति तथा विधा॥
सन्ति वेहासया अस्सा इद्धिमन्तो यसस्सिनो।
ते पि आदाय गच्छेय्युं यस्स होन्ति तथा विधा॥

सन्ति वेहासया पक्खी इद्धिमन्तो यसस्सिनो ।
ते पि आदाय गच्छेय्युं यस्स होन्ति तथा विधा ।।
सन्ति वेहासया यक्खा इद्धिमन्थो यसस्सिनो ।
ते पि आदाय गच्छेय्युं यस्स होन्ति तथा विधा ।।
अतीतं मानुसं कम्मं दुक्कटं दुरभि सम्भवं ।
न तं सक्कोमि मोचेतुं अन्त लिक्खेन खत्तिय ।।"

[मनुष्य का पूर्व कर्म दुष्कर होता है। दुस्सह होता है। मैं तुझे उससे मुक्त नहीं कर सकता। हे क्षत्रिय ! तू ही जान। ऋद्धिमान यशस्वी नाग हैं जो आकाश-मार्ग से ले जाने में समर्थ हैं, यदि वैसे हाथी किसी के पास हों तो वे ही उसे आकाश-मार्ग से ले जा सकते हैं। ऋद्धिमान यशस्वी पक्षी हैं जो आकाश-मार्ग से ले जाने में समर्थ हैं, यदि वैसे पक्षी किसी के पास हों तो वे ही उसे आकाश-मार्ग से ले जा सकते हैं। ऋद्धिमान यशस्वी आकाशगामी यक्ष हैं, यदि वैसे यक्ष किसी के पास हों तो वे ही उसे आकाश-मार्ग से ले जा सकते हैं। मनुष्य का पूर्व कर्म दुष्कर होता है, दुस्सह होता है। हे क्षत्रिय ! मैं तुझे आकाश-मार्ग से मिथिला नगरी ले जाकर चूकनीराज से नहीं बचा सकता।]

राजा यह सुन अप्रतिहत हो गया। तब सेनक ने सोचा, 'अब राजा और हमारे लिये पण्डित के सिवा दूसरा कोई सहारा नहीं। राजा तो उसकी बात सुन भयभीत हो गया है। कुछ बोल नहीं सकता। मैं पण्डित से प्रार्थना करता हूं।'

उसने कहा, "पण्डित ! भारी समुद्र में डूबने वाले आदमी को जब किनारा नहीं दिखाई देता तो जहाँ कहीं भी उसे शरण-स्थान मिलता है वहीं पर सुख अनुभव करता है। इसी प्रकार हे महोषध ! अब हमारा और राजा का तू ही शरण-स्थान है। तू ही हम मन्त्रियों में श्रेष्ठ है। हमें दुख से मुक्त कर।"

महोषध पण्डित ने उसका निग्रह करते हुए कहा, "मनुष्य का पूर्व कर्म दुष्कर होता है, दुस्सह होता है। मैं तुझे इस दुख से मुक्त नहीं कर सकता। तू ही जान।"

राजा ने इच्छापूर्ति का रास्ता न देख मृत्यु से भयभीत हो, महोषध पण्डित से बातचीत करने में अपने आपको असमर्थ पा सोचा—'हो सकता है, सेनक ही कोई उपाय जानता हो, उससे पूछता हूं।' उसने कहा—

"सुणोहि येत वचनं, पस्ससेतं महब्भयं ।
सेनक दानि पुच्छामि, किं किच्चं दूध भञ्जसि ।।"

[मेरा वचन सुन। यह महान भय दिखाई देता है। हे सेनक ! मैं पूछता हूं कि अब क्या करना होगा ?]

यह सुन सेनक ने सोचा—'राजा उपाय पूछता है। भला हो चाहे बुरा, इसे एक उपाय बताता हूं।'

उसने कहा, "महाराज ! हम द्वार बन्द करके आग लगा दें और शस्त्र ले परस्पर एक-दूसरे का वध कर शीघ्र ही मर जायँ। हमें राजा चूकनी चिरकाल तक दुख देकर न मारने पावे।"

यह सुन राजा असन्तुष्ट हुआ। बोला, "अपने स्त्री-बच्चों की इस प्रकार चिता बना।"

तब राजा ने पुक्कस से पूछा। उसने कहा, "राजन ! हम ज़हर खाकर मर जायेंगे। शीघ्र ही जीवन समाप्त कर देंगे। हमें राजा चूकनी चिरकाल तक दुख देकर न मारने पावे।"

तब राजा ने देविन्द से पूछा। उसने कहा, "देव ! हम द्वार बन्द करके आग लगा दें और शस्त्र ले परस्पर एक-दूसरे का वध कर शीघ्र ही मर जायँ। जब महोषध भी हमें बचा नहीं सकता तब दूसरा कोई रास्ता नहीं।"

यह सुन राजा महोषध के प्रति किये गए अपराध का स्मरण कर उसके साथ वार्तालाप न कर सकने के कारण, उसे सुना-सुनाकर विलाप करने लगा।

"जैसे केले के तने को छीलने पर अन्दर से कोई भी सारतत्व नहीं निकलता, उसी प्रकार लाख खोजने पर भी हमें प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता। जिस प्रकार शिम्बली वृक्ष में से भी खोजने पर हमें कुछ सारतत्त्व नहीं प्राप्त होता उसी प्रकार खोजने पर हमें प्रश्न का

उत्तर नहीं मिलता। जैसे हाथी का निजल स्थान में निवास हो उसी प्रकार इन दुष्ट, मूर्ख तथा अनजान मनुष्यों के बीच हमारा रहना आशंका में रहना है। मेरा हृदय काँपता है। मुँह सूखता है। जैसे आग से जले आदमी को धूप में शान्ति नहीं प्राप्त होती उसी प्रकार मुझे चैन नहीं है। जैसे सुनारों की आग अन्दर से जलाती है, बाहर से नहीं, उसी प्रकार मेरा हृदय भी अन्दर से जल रहा है, बाहर से नहीं।"

यह सुन महोषध पण्डित ने सोचा—'यह राजा अत्यन्त कष्ट पा रहा है। यदि इसे सान्त्वना नहीं दूँगा तो इसका कलेजा फट जायगा।' उसे सान्त्वना देते हुए पण्डित ने कहा, "महाराज ! आप मत डरें। मैं आपको राहु के मुख से चन्द्रमा और सूर्य को तरह, कीचड़ में फँसे हाथी की तरह, पिटारी में बन्द साँप की तरह, जाल में फँसी मछली की तरह मुक्त करा लूँगा। मैं आपको रथ, सेना तथा वाहनों सहित मुक्त करा लूँगा। मैं विदेहों को ऐसे भगा दूँगा जैसे ढेले कौओं की सेना को। उस प्रज्ञा से क्या प्रयोजन और वह मंत्री भी किस काम का जो विपत्तिग्रस्त अपने राजा को दुख से न बचा ले।"

उसकी बात सुनी तो राजा-सहित मन्त्रियों को भी शान्ति मिली।

17

महोषध पण्डित का सिंहनाद सुन सभी संतुष्ट हुए। उन्हें विश्वास हो गया कि अब उनकी जान बच जायगी। तब सेनक ने महोषध पण्डित से पूछा, "पण्डित ! आप हम सबको कैसे ले जाएँगे ?"

"मैं अलंकृत सुरंग से ले जाऊँगा। तुम तैयार होओ।"

उसने सुरंग का द्वार खोलने के लिये योद्धाओं को आज्ञा देते हुए गाथा कही—

"एथ माणवा उट्ठेथ सोधेथ सन्धिनो ।
वेदेहो सह मच्चेहि उम्मग्गेन गमिस्सति ॥"

[तरुणो ! उठो ! सुरंग और संध को खोलो । अमात्य सहित विदेह-नरेश सुरंग से जायगा ।]

उन्होंने सुरंग का द्वार खोल महोषध को सूचना दी। पण्डित ने राजा को संकेत किया, "देव ! यह समय प्रासाद से उतरने का है ।"

राजा उतरा। सेनक ने सिर की पगड़ी उतारी। कपड़ा भी उतारने लगा। पण्डित ने यह देख पूछा, "तात ! क्या करता है ?"

"सुरंग से जाते समय पगड़ी सँभाल, काछ कसकर जाना चाहिये ।"

"सेनक ! ऐसा मत सोच कि सुरंग से जाना है तो झुककर, घुटनों के बल जाना होगा। यदि हाथी से जाना चाहता है तो हाथी पर चढ़। सुरंग अठारह हाथ ऊँची है। विशाल द्वार है। जैसे चाहे सज-सजाकर राजा के आगे-आगे चल ।"

पण्डित ने सेनक को आगे किया। राजा और अन्य अमात्यों को बीच में तथा स्वयं पीछे-पीछे हो लिया। सुरंग में लोगों के लिये खाने-पीने की बहुत सामग्री थी। लोग खाते-पीते सुरंग देखते चल रहे थे। पण्डित 'महाराज ! चलें।' कह राजा को प्रेरित करता हुआ पीछे-पीछे चल रहा था। राजा अलंकृत देवसभा के समान सुरंग को देखता चल रहा था।

जब योद्धाओं को पता लगा कि राजा आया है तो वे चूकनी राजा की माता, देवी, पुत्र और पुत्री को लेकर ऊँचे महल पर जा पहुँचे। राजा भी महोषध सहित सुरंग से निकला। चूकनी राजा की माता आदि ने जब विदेह-नरेश और महोषध को देखा तो समझा कि हम निश्चय से पराए हाथों में फँस गये हैं। हमें लेकर यहाँ आने वाले पण्डित के ही आदमी थे। मृत्यु से डरकर उन्होंने चिल्लाना आरम्भ किया। उस समय चूकनी राजा भी इस डर से कि कहीं विदेह-नरेश भाग न जाय गंगा से गव्यूति-मात्र की दूरी पर था। उसने शान्त रात्रि में उनकी आवाज़ सुनी तो उसकी इच्छा हुई कि कहे कि यह तो नन्दा देवी की आवाज़ है। किन्तु वह कुछ नहीं कह सका।

उसे डर लगा कि कोई यह मज़ाक न करे कि नन्दा देवी को यहाँ कहाँ देख रहे हो !

महोषध पण्डित ने पंचालचण्डी कुमारी को वहाँ रत्नों के ढेर पर बिठा उसका अभिषेक कर कहा, "महाराज ! आप इसी के लिए आये हैं। यह आपकी पटरानी हो।"

फिर तीन सौ नौकाएँ लाई गईं। राजा महल से उतर अलंकृत नौका पर चढ़ा। वे चारों पण्डित भी नौकाओं पर चढ़े। तब महोषध पण्डित ने राजा को यह उपदेश दिया, "देव ! चूकनी राजा के अभाव में यह पंचाल चण्ड ही आपका ससुर है। यह आपकी सास है। जो कुछ माता के प्रति कर्त्तव्य हैं, वे ही आप अपनी सास के प्रति करें। जैसा अपनी एक ही माता से जन्मा सहोदर भाई हो वैसे ही हे राजन ! आप पंचाल चण्ड को समझें। यह राजपुत्री पंचालचण्डी है जिसे आप चाहते थे। अब इसके साथ जो चाहे करें। यह आपकी भार्या है।"

बड़े भारी दुख से मुक्त हो नौका से जाने के इच्छुक राजा ने पण्डित से कहा, "तात ! तू किनारे पर खड़ा ही खड़ा बात कर रहा है। जल्दी से नौका पर चढ़। अब किनारे पर क्यों खड़ा है ? बड़ी कठिनाई से हम दुख-मुक्त हुए हैं। हे महोषध ! अब हम चलें।"

"महाराज ! यह धर्म नहीं है कि मैं सेना का नायक होकर सेना को छोड़ अपनी जान बचा लूँ। मैं उसे लेकर ही आऊँगा। उसमें कुछ लोग दूर से चलकर आने के कारण थके हैं और सोये पड़े हैं। कुछ खा-पी रहे हैं। वे यह भी नहीं जानते कि हम निकल आए हैं। कई रोगी हैं। मेरे साथ चार महीने तक काम करने वाले, मेरे उपकारी, मनुष्य यहाँ बहुत हैं। मैं किसी एक आदमी को भी छोड़-कर नहीं जा सकता। मैं रुककर अपनी उस सारी सेना को यहाँ से सकुशल लेकर आऊँगा। महाराज, आप कहीं भी बिना विलम्ब किये शीघ्र जायँ। मैंने रास्ते में हाथी, घोड़े आदि वाहन

रखे हैं। थके-थके वाहनों को छोड़ समर्थ वाहन ले शीघ्र मिथिला पहुँचें।"

"अल्प सेना वाला होकर तू महान् सेना के सामने कैसे ठहरेगा ? हे पण्डित ! दुर्बल बलवान द्वारा मारा जायगा।"

"राजन् ! बुद्धिमान के पास यदि अल्प सेना भी हो तो भी वह बहुत सेना वाले मूर्ख को जीत लेता है। उसी प्रकार एक राजा कई राजाओं को जीत लेता है, जैसे उदय होने वाला सूर्य अन्धकार को। आप जायँ।"

राजा को शत्रु के हाथ से मुक्त होने की प्रसन्नता थी और पंचाल-चण्डी के मिल जाने से उसका मनोरथ भी पूरा हो गया था, इसलिये वह महोषध पण्डित के गुणों का वर्णन करता तथा स्मरण करता हुआ सेनक पण्डित से बोला—

"सुसुखं वत संवासो पण्डितेहिति सेनक,
पक्खीव पञ्जरे बद्धे मच्छे जाल गतेरिव।
अमित्तहत्थत्थगते मोचयी नो महोसधो॥"

[हे सेनक ! पण्डितों के साथ रहना बड़ा सुखद है। पिंजरे में बन्द पक्षी के समान और जाल में फँसी मछली के समान हमें महोषध ने शत्रु के हाथ से मुक्त किया है।]

तब विदेह-नरेश नदी पार कर योजन-भर की दूरी पर महोषध द्वारा बसाये गए गाँव में पहुँचा। वहाँ महोषध द्वारा नियुक्त मनुष्यों ने राजा को हाथी-घोड़े आदि वाहन तथा खाना-पीना दिया। उसने थके हुए हाथी, घोड़े, रथ छोड़े और दूसरे वाहन ले उनके साथ अन्य गाँव पहुँचा। इस तरह विदेहराज नौ योजन का मार्ग तय कर अगले दिन प्रातःकाल ही मिथिला नगरी पहुँचा।

महोषध ने भी सुरंग के द्वार पर पहुँच अपनी बाँधी हुई तलवार खोली और सुरंग के द्वार पर बालू फैला दी। बालू फैला, सुरंग में दाखिल हो, सुरंग से जाकर उस नगर में प्रवेश किया। फिर सुगन्धित जल से स्नान कर, नाना प्रकार के श्रेष्ठ भोजन खा, शैया पर लेट सोचने लगा कि मेरा मनोरथ पूरा हो गया।

उधर चूकनी राजा सारी रात पहरा देने के बाद अरुणोदय होने पर महाबलशाली हाथी पर चढ़ उपकारी नगर में पहुँचा। फिर उसने अपनी सेना को—जिसमें हाथी-सवार थे, सैनिक थे, रथ-सवार थे, पैदल थे, जो धनुष-विद्या में कुशल थे बाल तक को जो बींध सकते थे—विदेह-नरेश को जीते-जी पकड़ने की आज्ञा देते हुए कहा, "योद्धाओ! बड़े दाँतों वाले, बलवान, साठ वर्ष के हाथी भेजो ताकि वे विदेह-नरेश का बनवाया हुआ नगर रौंद डालें। जो बछड़े के दाँत के समान श्वेत हैं, जिनकी नोक तीखी है, जो हड्डियों को भी बींध सकते हैं, ऐसे तीर धनुष के ज़ोर से गिराओ। हाथ में ढाल लिये बहादुर, विचित्र दण्डयुक्त आयुधधारी तरुण योद्धा कूद कर महानाग हाथियों के सम्मुख हो। तेल से धोई हुई, प्रज्वलित, चमकती हुई शक्तियाँ, तारे की तरह दीप्त हों। आयुध तथा बल से युक्त, कवचधारी, बाजूबन्द पहनने वाले, संग्राम से न भागने वाले, योद्धाओं से बचकर विदेह-नरेश चाहे आकाश-मार्ग से भी भागे; तब भी न जाने पावे। मेरे पास उनतालीस हज़ार योद्धा हैं, जिनके समान सारी पृथ्वी ढूँढने पर भी योद्धा नहीं हैं। बलवान, साठ वर्ष के, बड़े दाँतों वाले, कसे हुए हाथी हैं जिनके कन्धों पर सुन्दर कुमार शोभा देते हैं। पीतवर्ण अलंकार, पीतवर्ण वस्त्र तथा पीतवर्ण चादरों वाले कुमार हाथियों के कन्धों पर उसी प्रकार शोभा देते हैं जैसे नन्दन वन में देव-पुत्र। पाठीन (मछली) के वर्ण की, तेल लगी हुई, चमकती हुई, बराबर धार वाली तेज़ तलवारें जिन्हें वीर पुरुषों ने धारण कर रखा है, मध्याह्न सूर्य की तरह चमकदार ज़ंग-रहित, फौलाद की बनी हुई, प्रहार करने में पटु, बलवान पुरुषों द्वारा धारण की हुई तलवारें, सोने की मूठ वाली, लाल रंग की म्यान वाली नंगी तलवारें, ऐसे ही शोभा देती हैं जैसे घने बादलों के बीच बिजली।

"पताकाएँ और कवच धारण करने वाले, ढाल-तलवार चलाने में पण्डित, मूठ पकड़ने में शिक्षित तथा हाथी की गर्दन गिरा दे सकने वाले योद्धाओं से घिरे होने के कारण अब तेरी (विदेह-नरेश की)

यहाँ से मुक्ति नहीं है। अब मैं तेरा कोई ऐसा प्रताप नहीं देखता कि जिससे तू यहाँ से बचकर मिथिला पहुँच सके।"

महोषध के आदमियों ने 'कौन जाने कब क्या हो' सोचा और आकर उसके गिर्द हो गये। उस समय पण्डित शैया से उठ, प्रातः कृत्य समाप्त कर, जलपान के अनन्तर, सज-सजाकर, लाख के मूल्य के काशीवस्त्र धारण कर, लाल कम्बल एक कन्धे पर रख, सात रत्न जड़ित, भेंट में मिला हुआ दण्ड ले, स्वर्ण पादुका पर चढ़, देव अप्सरा के समान अलंकृत स्त्री द्वारा पंखा किया जाता हुआ, अलंकृत प्रासाद के झरोखे को खोल अपने आपको चूळनी राजा को दिखाते हुए, देवेन्द्र शक्र की तरह इधर-उधर टहलने लगा। चूळनी राजा उसकी शोभा देख चित्त को प्रसन्न न रख सका।

'अब इसे पकड़ूँगा' सोच उसने जल्दी-जल्दी हाथी भेजे। पण्डित ने सोचा—'यह समझता है कि मैंने विदेह-नरेश को काबू में कर लिया है, और इसलिये जल्दी-जल्दी चला आ रहा है। यह नहीं जानता कि हमारा राजा इसके बाल-बच्चे लेकर चला गया है। अपना सोने के आईने जैसा मुँह इसे दिखाकर इसके साथ बातचीत करूँगा।' उसने झरोखे में बैठे ही बैठे मुँह से मधुर वाणी निकाल कहा—

किन्नु सन्तरमानोव नागं पेसेसि कुञ्जरं।
पहट्ठरूपो आयतासि लद्धत्थोस्मिति मञ्ञसि॥
ओहरेतं धनुं चापं खुरप्पं पटिसंहर।
ओहरेतं सुभं वम्मं वेळूरिव मणिसन्थतं॥"

[क्यों जल्दी-जल्दी हाथी को आगे बढ़ा रहा है? यह समझकर कि मेरा मनोरथ पूरा हो गया, बड़ा प्रसन्न-प्रसन्न चला आता है। इस धनुष और इन बाणों को समेट ले और बिल्लौर तथा मणि जड़े इस कवच को भी उतार दे।]

राजा ने उसका कहना सुना तो सोचा कि गृहपति-पुत्र मेरा मज़ाक उड़ा रहा है। आज बताऊँगा तेरा क्या करना है। पण्डित को धमकी देते हुए उसने गाथा कही—

"पसन्नमुखवण्णोसि मिहितपुब्बञ्च भाससि ।
होति खो मरणकाले तादिसी वण्णसम्पदा ॥"

[तेरे चेहरे पर प्रसन्नता है। तू मुसकराहट के साथ बोलता है। मरने के समय आदमी के मुँह पर ऐसी ही रौनक आ जाती है।]

जिस समय वह उससे बातचीत कर रहा था, बड़ी भारी सेना ने महोषध पण्डित की श्री देख सोचा—'हमारा राजा महोषध पण्डित के साथ मन्त्रणा कर रहा है। सुनें तो क्या बातचीत हो रही है।' सारी सेना राजा के निकट जा पहुँची। पण्डित ने भी उस राजा की बात सुनी तो सोचा—'यह नहीं जानता कि मैं महोषध पण्डित हूं। मैं इसे अपने-आपको नहीं मारने दूँगा।" तब उसने कहा—

"राजन्! तेरी गर्जना व्यर्थ है। हे क्षत्रिय! तेरे षड्यन्त्र का पता लग गया है। जिस प्रकार खुलंक (घोड़ा) सिन्धव (घोड़े) को नहीं पा सकता उसी प्रकार तू अब हमारे राजा को भी नहीं पा सकता। हमारा राजा कल ही अपने अमात्यों तथा परिजनों सहित गंगा पार कर गया है। यदि तू पीछा भी करेगा तो, जैसे हंसराज का पीछा करने वाला कौआ गिर पड़ता है, वैसे ही तू भी रास्ते में ही गिर पड़ेगा।

"रात के समय गीदड़ किंसुक फूल को फूला देखते हैं। वे अधम उसे माँस-पेशी मान घेरकर खड़े हो जाते हैं। रात्रि के बीतने पर जब सूर्य उदय होता है तो फूले हुए किंसुक को देखकर वे अधम निराश हो जाते हैं। उसी तरह गीदड़ों के किंसुक फूल को छोड़कर चले जाने की तरह, हे राजन! तू भी निराश होकर जायगा।"

राजा ने उसकी निर्भय वाणी सुनी तो सोचा—'यह गृहपति-पुत्र बहुत बढ़-बढ़कर बातें करता है। निश्चय ही इसने विदेह-नरेश को भगा दिया होगा।'

उसे बहुत अधिक क्रोध आया। वह फिर सोचने लगा—'पहले भी इस गृहपति-पुत्र के कारण हम निर्वस्त्र तक हो गये थे। अब इसने हमारे हाथ में आया हुआ शत्रु भी भगा दिया। इसने हमारा बहुत अनर्थ किया है। दोनों को दिया जाने वाला दण्ड इसे ही दूँगा।'

राजा ने आज्ञा देते हुए कहा, "सैनिको ! जिसने मेरे हाथ आए शत्रु विदेह-नरेश को भगा दिया, उसके हाथ-पाँव तथा कान-नाक काट डालो। जिसने मेरे हाथ आए शत्रु को भगा दिया उसे पकाने योग्य माँस की तरह सीख पर चढ़ाकर पकाओ। जैसे पृथ्वी पर बैल का चमड़ा फैलाया जाता है, और जैसे सिंह या व्याघ्र का चमड़ा सीख पर चढ़ाया जाता है उसी प्रकार जिसने हाथ में आए हुए शत्रु को भगा दिया, हम उसे शक्ति से फैलाकर काटेंगे।"

यह सुन महोषध पण्डित मुसकराया। वह सोचने लगा—'यह राजा नहीं जानता कि मैंने इसकी देवी और इसके परिवार को मिथिला पहुँचा दिया है। इसीलिये मुझे दण्ड देने की बात सोचता है। क्रोध के वशीभूत हो यह मुझे शूल से बींध भी सकता है, अथवा और जो इसे अच्छा लगे कर सकता है। इसे हाथी पर बैठे ही बैठे बेहोश बना देने वाली बात कहता हूं'—

"हे राजन् ! यदि मेरे हाथ-पैर, नाक-कान कटवायेगा तो उसी तरह विदेह-नरेश पंचालचण्ड, पंचालचण्डी, नन्दा देवी और तेरी माता के भी हाथ-पैर, नाक-कान काट लेगा। यदि पकाने योग्य माँस की तरह मुझे सीख पर चढ़ाकर पकायेगा, तो विदेह-नरेश, पंचालचण्ड, पंचालचण्डी, नन्दा देवी और तेरी माता को भी सीख पर चढ़ाकर पकायेगा। यदि मुझे फैलाकर शक्ति से बिंधवायेगा तो विदेह-नरेश पंचालचण्ड, पंचालचण्डी, नन्दा देवी और तेरी माता को भी शक्ति से बिंधवायेगा। इसी प्रकार मैंने और विदेह-नरेश ने एकान्त में मन्त्रणा की थी। जैसे चर्मकारों का कान्ती से कमाया हुआ बालिश्त-भर चमड़ा तीरों को रोककर शरीर की रक्षा का कारण बन जाता है, उसी प्रकार मैं भी यशस्वी विदेह को सुख देने वाला हूं, और उसके दुख को मिटाने वाला हूं। जैसे बालिश्त-भर चमड़ा तीरों को रोकता है उसी प्रकार मैं तेरी बुद्धि को कुण्ठित करता हूं।"

यह सुन राजा सोचने लगा—'गृहपति-पुत्र क्या बोलता है। जैसे मैं इसे दण्ड दूंगा वैसे ही विदेह-नरेश मेरे स्त्री-बच्चों को भी दण्ड देगा। यह नहीं जानता कि मेरे स्त्री-बच्चे पहरे में कितने सुरक्षित

हैं। अब मारा जाऊँगा सोच यह मृत्यु-भय के कारण ही ऐसा विलाप करता है।'

राजा ने उसके कहने का विश्वास नहीं किया। तब महोषध पण्डित ने यह गाथा कही—

"इङ्घ पस्स महाराज सुञ्ञं अन्तेपुरंतव।
आरोधो च कुमारा च तव माता च खत्तिय।
उम्मग्गा नीहरित्वान वेदेहस्सुपनामिता।"

[महाराज! अपने अन्तःपुर को देखें। वह शून्य है। हे क्षत्रिय! तेरा रनिवास खाली है। कुमार, पुत्री, माता और देवी को सुरंग से निकालकर विदेह-नरेश को सौंप दिया गया है।]

यह सुन राजा ने सोचा—'पण्डित बड़े विश्वास के साथ बोल रहा है। मैंने रात के समय गंगा के पास नन्दा देवी का शब्द भी सुना था। यह पण्डित महा प्रज्ञावान है। कहीं सच ही न हो।' उसे भयानक शोक उत्पन्न हुआ। लेकिन धैर्य रख, चिन्ता न करते हुए की तरह एक अमात्य को बुला, पता लगाने के लिये भेजते हुए कहा, "मेरे अन्तःपुर में जाकर पता लगाओ कि जो कुछ यह कह रहा है वह सत्य है अथवा झूठ?"

वह अमात्य, आदमियों को लेकर अन्तःपुर पहुँचा। वहाँ उसने द्वार खोल अन्दर जाकर देखा कि हाथ-पाँव बँधे हुए, मुँह ढके पहरेदार खूंटियों से लटक रहे हैं। बर्तन टूटे-फूटे पड़े हैं, और खाना-पीना जहाँ-तहाँ बिखरा पड़ा है। रत्नघर का द्वार खोलकर रत्न लूट लिये गए हैं। खुले दरवाज़ों, खिड़कियों से कौवे भीतर जाकर घूम रहे हैं। सारा अन्तःपुर छोड़े हुए नगर अथवा श्मशान भूमि की तरह श्रीहीन है।

तब राजा को सूचना दी गई, "महाराज! जैसा यह महोषध पण्डित कहता है वैसा ही है। सारा अन्तःपुर कौओं के पत्तन की तरह शून्य है।"

18

चूकनी राजा चारों जनों के सम्भव-वियोग के शोक से काँपने लगा। उसे हुआ कि इस सारे शोक का मूल कारण गृहपति-पुत्र है। वह डण्डा खाये ज़हरीले साँप की तरह महोषध पण्डित के प्रति क्रोधित हो गया। महोषध ने उसे ढंग से देखा तो सोचा—'यह राजा बहुत ऐश्वर्यशाली है। कहीं क्रोध में आकर यह सोचे कि मुझे उनसे क्या और मुझे मरवा डाले। क्यों न मैं नन्दा देवी के शरीर-सौन्दर्य की प्रशंसा करूँ, जैसे इसने उसे कभी देखा ही न हो? तब सम्भव है कि वह उसे याद कर यह सोचे कि यदि मैं महोषध को मारूँगा तो ऐसे स्त्री-रत्न को फिर न पा सकूँगा। और यह अपनी भार्या के साथ स्नेह होने के कारण मेरे साथ कुछ न करेगा।'

यह सोच उसने आत्म-स्वार्थ, प्रासाद पर खड़े ही खड़े, लाल वस्त्र के भीतर से स्वर्ण-वर्ण बाँह निकालकर उसके (नन्दा देवी के) जाने के मार्ग का वर्णन करते हुए कहा—

"इतो गता महाराज नारी सब्बंगसोभना।
कोसुम्भफलक सुस्सोणी हंसगग्गर भाणिनी॥
इतो नीता महाराज नारी सब्बंगसोभना।
कोसेय्यवसना सामा जातरूपसुमेखला॥
सुरत्तपादा कल्याणी सुवण्णमणी मेखला।
पारेवतक्खी सुतनु बिम्बोट्ठा तनुमज्झिमा॥
सुजाता भुजगलट्ठीप पेल्लीवतनुमज्झिमा।
दीघस्सा केसा असिता ईसकग्गपवेल्लिता॥
सुजाता मिगछायीव हेमन्तासिग्गरिव।
नदी व गिरिदुग्गेसु सञ्छन्ना खुद्दवेकुहि॥
नागनासूरू कल्याणी पठमा तिम्बरूत्थनी।
नातिदीघा नातिरस्सा नालोमा नातिलोमसा॥"

[महाराज! सर्वांग सुन्दरी, जिसकी श्रोणी स्वर्ण-फलक के समान

है और जो हंसों के समान मधुरभाषिणी है, इस रास्ते से गई है। महाराज! सर्वांगसुन्दरी नारी जो कोषेय्य वस्त्र धारण किए थी, जो स्वर्ण-वर्ण थी तथा जिसकी सुनहरी मेखला थी, यहाँ से ले जाई गई है। जिसके पाँव रक्तवर्ण हैं, जो कल्याणी है, जिसकी मणि-मेखला स्वर्ण-वर्ण है, जिसकी आँखें कबूतर के समान हैं, जिसका सुन्दर शरीर है, जिसके होंठ बिम्ब (फल) के समान हैं, और जो मध्यमाकार की है। भुजंग-लता की तरह सुजात, स्वर्ण-वेदिका की तरह मंझली, लम्बे काले केशों वाली, जो आगे से थोड़ा घुँघराले हैं। व्याघ्र की बच्ची के समान, सुजात, हेमन्त ऋतु की अग्नि-शिखा के समान प्रकाशवती, छोटे श्रोतों द्वारा गिरि-दुर्गों में शोभायमान नदी की तरह सुशोभित। हाथी की सूंड-जैसी जाँघ वाली, सुन्दरी, तिम्बरु-स्तन वालियों में प्रथम; न बहुत ऊँची, न बहुत नीची और बाल-शून्य और न अति बालों वाली।]

जब महोषध नन्दा देवी के रूप का इस प्रकार वर्णन कर रहा था तो वह, राजा के लिए ऐसी हो गई जैसे पहले कभी न देखी हो। उसके मन में स्नेह पैदा हो गया। पण्डित ने यह जान कि उसके मन में स्नेह पैदा हो गया है अगली गाथा कही—

"नन्दाय, नून मरणे नन्दसि सिरिवाहन।
अहञ्च नून नन्दाच गच्छाम यमसाधनं॥

[हे श्रीवर्धन! तू नन्दा की मृत्यु से प्रसन्न होता है। मैं और नन्दा दोनों इकट्ठे यम के पास जाएँगे।]

पण्डित ने अब तक नन्दा देवी की ही प्रशंसा की, औरों की नहीं। ऐसा क्यों है? क्योंकि प्राणी सबसे अधिक प्रिय भार्या से ही आसक्त रहते हैं। फिर माता की याद आती है, फिर बेटे-बेटी की भी आ सकती है। इसीलिए उसने उसी का वर्णन किया। राज-माता का तो बूढ़ी होने के कारण ही उसने वर्णन नहीं किया। ज्ञानी महोषध के मधुर स्वर से वर्णन करते-करते ही राजा को ऐसा हुआ मानो नन्दा देवी आकर उसके सामने ही खड़ी है।

तब राजा सोचने लगा—'महोषध के अतिरिक्त और कोई मेरी भार्या लाकर नहीं दे सकता।' नन्दा देवी की याद आने से उसके मन में शोक उत्पन्न हुआ। तब महोषध ने राजा को सान्त्वना दी, "महाराज! चिन्ता न करें। तुम्हारी देवी, और माता, पुत्र तीनों आ जायेंगे। मेरे यहाँ से जाने की देर है। राजन! आप तीनों के लिये धीरज धारण करें।"

फिर राजा ने सोचा—'मैंने अपने नगर को सुरक्षित करवा इसके 'उपकारि' नगर को इतनी सेना से घेरकर रखा। लेकिन इसने इतने सुरक्षित नगर में से भी मेरी देवी, पुत्र, पुत्री और माता को निकलवाकर विदेह-नरेश को दे दिए। साथ ही हमें और घेर कर खड़े हुए इतने लोगों को बिना पता लगे, सेना-सहित विदेह-नरेश को भी भगा दिया। क्या यह दिव्य माया जानता है अथवा नज़र-बन्दी ?

राजा ने पण्डित से पूछा, "हाथ में आये मेरे शत्रु विदेह को निकाल भगाया, क्या तू दिव्य माया पढ़ा है अथवा नज़र-बन्द करना जानता है ?"

"महाराज! मैं दिव्य माया जानता हूं। पण्डितजन दिव्य-माया जानकर ख़तरा आने पर अपने को तथा दूसरों को भय से मुक्त करते हैं। वे अपने आपको भी छुड़ा लेते हैं। मेरे पास सेंध लगाने वाले कुशल जवान हैं, जिनके बनाये हुए मार्ग से ही विदेह-नरेश मिथिला गया।"

यह सुन कि 'सेंध से विदेह-नरेश गया' राजा की इच्छा हुई कि देखे वह सुरंग कैसी है ? उसका इशारा समझ पण्डित ने कहा, "महाराज! इस सुरंग को देखें। इसमें हाथी, घोड़े, रथ तथा पैदल सभी आसानी से चल सकते हैं, और उन सबसे प्रकाशित होकर अच्छी तरह निर्मित है। मेरी प्रज्ञारूपी चन्द्रमा और ज्ञान-रूपी सूर्य के उदय होने के स्थान पर अलंकृत सुरंग में अस्सी महाद्वार और चौंसठ छोटे द्वार, एक सौ शयनागार तथा सैकड़ों प्रकाश-कोठे

देखें। मेरे साथ प्रसन्न-चित्त होकर अपनी सेना सहित 'उपकारि' नगर में प्रवेश करें।"

इतना कह उसने सुरंग-द्वार खुलवाया। सौ जनों को साथ ले राजा सुरंग में घुसा। महोषध भी प्रासाद से उतर राजा को प्रणाम कर अनुचरों सहित सुरंग में घुसा। राजा ने सुरंग को अलंकृत देव-नगर के समान पा पण्डित की प्रशंसा करते हुए कहा, "विदेह राष्ट्र के नागरिक बड़े भाग्यवान हैं, जिनके घर अथवा देश में ऐसे पण्डित रहते हैं, जैसा महोषध, तू है।"

तब पण्डित ने उसे सौ शयनागार दिखाये। एक का दरवाज़ा खोलने पर सब दरवाज़े खुल जाते थे। एक बन्द कर देने पर सबके दरवाज़े बन्द हो जाते। राजा सुरंग देखता हुआ आगे-आगे चल रहा था। पण्डित पीछे-पीछे। सारी सेना सुरंग के भीतर चली गई। राजा सुरंग से बाहर निकल आया। पण्डित ने जब जाना कि राजा निकल आया तो स्वयं निकलकर दूसरों को निकलने दिये बिना सुरंग का दरवाज़ा बन्द करने के लिये अर्गल खींच दी। अस्सी महाद्वार, चौसठ छोटे द्वार, सौ शयनागार, सैकड़ों प्रकाश-कोष्ठों के द्वार एक ही साथ बन्द हो गये। सारी सुरंग में लोकन्तरिक नगर जैसा अन्धकार छा गया। लोग डर गये। तब महोषध ने कल सुरंग में प्रवेश करते समय जो तलवार रखी थी, वह ली और ज़मीन से अठारह हाथ ऊँचे उछल, चढ़कर, राजा को हाथ से पकड़ तलवार म्यान से निकाल ली। फिर राजा को धमकाते हुए पूछा, "महाराज! सारे जम्बूद्वीप में राज्य किसका है?"

उसने डरकर कहा, "पण्डित, तेरा!" और 'अभय' की याचना की। पण्डित ने तलवार राजा को दे दी और कहा, "महाराज! डरें नहीं। मैंने आपको मारने के लिये तलवार हाथ में नहीं ली थी। अपनी प्रज्ञा दिखाने के लिये ही ली थी। महाराज! यदि आप मुझे मारना चाहते हैं तो इसी तलवार से मार डालें और यदि अभय देना चाहते हैं तो अभय दे दें।"

"पण्डित ! तू चिन्ता मत कर। मैंने तुझे पहले ही अभय दे रखी है।"

दोनों ने तलवार छूकर परस्पर द्वेष-रहित रहने की शपथ खाई।

तब राजा ने महोषध से पूछा, "पण्डित ! इतना प्रज्ञावान होकर भी तू राज्य क्यों नहीं लेता ?"

"महाराज ! यदि मैं इच्छा करूँ तो आज ही सारे जम्बूद्वीप के राजाओं को मारकर राज्य ले सकता हूं। किन्तु दूसरों को मारकर ऐश्वर्य प्राप्त करना पण्डितों द्वारा प्रशंसित कार्य नहीं है।"

"पण्डित ! देख, लोगों को सुरंग के बाहर निकलने का द्वार नहीं मिल रहा है, चिल्ला रहे हैं। सुरंग का द्वार खोल, लोगों के प्राण बचा।"

तब पण्डित ने द्वार खोल दिया। सारी सुरंग प्रकाशित हो गई। लोगों को सान्त्वना हुई। सभी राजा अपनी-अपनी सेना के साथ बाहर आये और पण्डित के पास गये। वह राजा के साथ ऊँची मंजिल पर था। वे राजागण बोले, "पण्डित ! तेरे कारण हमें जीवन-दान मिला है। यदि मुहूर्त-भर और सुरंग का द्वार न खोलता तो हम सभी का वहीं मरना हो जाता।"

"महाराजो ! न केवल अभी, पहले भी मेरे ही कारण तुम्हारे प्राण बचे हैं।"

"पण्डित ! कब ?"

"याद है कि एक हमारा नगर छोड़ सारे जम्बूद्वीप का राज्य ले पंचाल-नरेश ने जयपान पीने के लिये सुरा तैयार की थी ?"

"पण्डित, हाँ !"

"तब इस राजा ने केवट्ट के साथ कुमन्त्रणा कर शराब और मत्स्य-माँस में विष मिलाकर तुम्हें मारने का आयोजन किया था। तब मैंने यह सोच कि मेरे देखते-देखते ये इतने जने अनाथों की तरह न मरें, अपने आदमी भेजकर, सभी बर्तन तुड़वा, इनकी मन्त्रणा बिगाड़ तुम्हें जीवन-दान दिया था।"

वे सभी उद्विग्न-चित्र हुए और चूळनी राजा से पूछा, "महाराज ! क्या यह सत्य है ?"

"हाँ ! पण्डित सत्य कहता है। मैंने केवट्ट की बात मान ऐसा किया था।"

तब उन सभी ने पण्डित का आलिंगन किया, "पण्डित ! तू ही हम सब का शरण-स्थान हुआ। तेरे ही कारण हमारे प्राण बचे।"

फिर उन सभी ने अलंकारों से महोषध की पूजा की। महोषध ने राजा से कहा, "महाराज ! आप चिन्ता न करें। यह कुसंगति का ही परिणाम है। आप इन राजाओं से क्षमा-याचना करें।"

राजा ने क्षमा-याचना की, "दुष्ट की संगति के कारण मैंने ऐसा किया। यह मेरा दोष है। क्षमा करें। फिर ऐसा नहीं करूँगा।"

तब राजा ने बहुत-सी खाने-पीने की सामग्री मँगवाई और उन सबके साथ, सुरंग में ही, सप्ताह-भर खेलते-खाते रहकर, नगर में प्रवेश कर महोषध का बहुत सत्कार किया। फिर सौ राजाओं के बीच ऊँची मंजिल पर बैठकर पण्डित को अपने ही पास रखने की इच्छा से कहा—

"वुत्तिञ्च परिहारञ्च दिगुणं भत्तवेतनं
ददामि विपुलं भोगं भुञ्ज कामे रमस्सु च
मा विदेहं पच्चगमा किं विदेहो करिस्सति ॥"

[मैं तुझे दुगुना ऐश्वर्य, ग्राम-निगमादि, खाना-पीना तथा वेतन दूँगा। यहीं रहकर विपुल कामभोगों में रमण कर। अब विदेह मत जा। विदेह-नरेश और तेरे लिये क्या करेगा ?]

पण्डित ने इसका निषेध करते हुए कहा—

"यो चजेथ महाराज भत्तारं धनकारणा
उभिन्नं होति गारय्हो अत्तनो च परस्स च
याव जोवेय्य वेदेहो नाञ्जस्स पुरिसो सिया ॥"

[महाराज ! जो कोई धन के लोभ से अपने स्वामी को छोड़ देता है, उसको अपना-आप भी उसकी निन्दा करता है और दूसरे

भी उसकी निन्दा करते हैं। जब तक विदेह जीता है तब तक मैं दूसरे का आदमी नहीं ही होऊँगा।]

तब राजा बोला, "पण्डित ! तो वचन दो कि जब तुम्हारा राजा दिवंगत हो जायगा, तब यहाँ आकर रहोगे ?"

"महाराज, जीता रहूंगा तो अवश्य आऊँगा।"

राजा ने उसका सप्ताह-भर बहुत आदर-सत्कार किया। जब पण्डित ने जाने की आज्ञा माँगी तो राजा ने कहा, "पण्डित ! मैं तुझे हज़ार निकष देता हूं। काशी-जनपद के अस्सी गाँव देता हूं। चार सौ दासियाँ देता हूं। सौ स्त्रियाँ देता हूं। हे महोषध ! सारी सेना लेकर सकुशल जा।"

"महाराज ! तुम अपने सम्बन्धियों के लिये चिन्तित न हो। मैंने अपने राजा को, जाते समय ही कह दिया था कि महाराज, नन्दा देवी को माता के स्थान पर रखें, पंचालचण्ड को छोटे भाई के स्थान पर समझें। हाँ ! तुम्हारी लड़की का भी अभिषेक करके उसे राजा के साथ विदा कर दिया था। तुम्हारी माता, देवी और पुत्र को शीघ्र ही भेज दूंगा।"

फिर राजा ने अपनी लड़की को देने के लिये दासी, दास, वस्त्र, अलंकार, हिरण्य, स्वर्ण, अलंकृत हाथी, अश्व, रथादि दिये। उसे विदा करते हुए राजा ने कहा, "घोड़ों को दुगुना तथा हाथियों को जितना लगे उतना चारा दो। रथी तथा पैदल जाने वालों को अन्न-पान से सन्तुष्ट करो। मिथिला पहुँचने पर तुम्हें महाराजा विदेह देखें।"

इस प्रकार राजा ने पण्डित का महान सत्कार कर विदा किया। उन सौ राजाओं ने भी सत्कार किया और बहुत भेंट दीं। तब वह बहुत से अनुयायियों के साथ मार्गारूढ़ हुआ और रास्ते में, भेंट में मिले गाँवों से कर वसूल करने के लिये आदमियों को भेजता हुआ विदेह राष्ट्र पहुँचा।

उधर सेनक पण्डित ने भी रास्ते में आदमी को नियुक्त कर

आदेश था कि कोई भी आए उसे सूचना दी जाय। उन्होंने तीन योज़न की दूरी से ही सूचना दी कि बहुत से अनुयायियों के साथ पण्ड़ित चला आ रहा है। यह सुन राजा ने महल पर चढ़ झरोखे से बड़ी भारी सेना देख सोचा—'महोषध की सेना तो थोड़ी-सी थी, यह तो बहुत ज़्यादा है। कहीं चूकनी राजा तो नहीं आ रहा है?' वह भयभीत हुआ। उसने सेनक से पूछा, "हाथी, घोड़े, रथ, पैदल—बड़ी भारी सेना दिखाई दे रही है। इस चतुरंगिनी सेना का रूप भयानक है—तुम क्या मानते हो?"

"महाराज! आपके लिये बड़े आनन्द की बात है। सारी सेना सहित महोषध सकुशल चला आ रहा है।"

"सेनक, पण्डित की सेना तो थोड़ी-सी है। यह तो बहुत बड़ी है!"

"महाराज! उसने राजा को प्रसन्न कर लिया होगा और उसी ने यह इतनी बड़ी सेना दी होगी।"

तब राजा ने नगर में मुनादी करा दी—'नगर को अलंकृत कर पण्डित का स्वागत किया जाय।' नागरिकों ने वैसा ही किया। पण्डित ने नगर में प्रवेश कर राजकुल जा, राजा को नमस्कार किया। राजा ने उसका आलिंगन किया और श्रेष्ठ-आसन पर बैठ कुशल-क्षेम पूछा, "जैसे चारों जने मुर्दे को श्मशान में छोड़कर चले आएँ उसी प्रकार हम भी तुझे कम्पिल्य राष्ट्र में छोड़कर चले आये। तूने किस तरह, किस हेतु से अथवा किस ढंग से अपने-आपको मुक्त कराया?"

"हे विदेह नरेश! मैंने उसका अर्थ अपने अर्थ से, और उसकी मन्त्रणा अपनी मन्त्रणा से, उसके राजाओं को भी ऐसे घेर लिया था जैसे समुद्र ने जम्बू द्वीप को घेर रखा था। राजा ने मुझे हज़ार निकष दिये, काशी जनपद के सौ गाँव दिए, चार सौ दासियाँ और सौ भार्याएँ दीं। मैं सकुशल, सारी सेना ले यहाँ आ पहुँचा।"

तब राजा ने अत्यन्त प्रसन्न हो, पण्डित की प्रशंसा करते हुए कहा, "पण्डितों के साथ रहना बड़ा सुखद है। पिंजरे में बन्द पक्षी

के समान और जाल में फँसी मछली के समान हमें महोषध ने शत्रु के हाथ से मुक्त किया। पण्डितजन सुखदायक होते हैं।"

राजा ने शहर में उत्सव की मुनादी करवा दी कि सप्ताह-भर उत्सव मनाया जाय। जो-जो भी मुझ से स्नेह रखते हों सभी पण्डित का सत्कार करें। सभी वीणा, भेरी तथा दण्डिय बजें। मागध-शंख नाद करें। सुन्दर दुन्दुभी बजें।

नगर तथा जनपद के लोग यों भी पण्डित का सत्कार करने के लिए उत्सुक थे। उन्होंने जब मुनादी सुनी तो और भी सत्कार किया। रनिवास के लोग, वैश्य तथा ब्राह्मण सभी पण्डित के लिये अन्न-पान लाये। हाथी-सवार, रथी, घुड़सवारों ने भी। जनपद और निगम के लोगों ने भी। पण्डित के आने पर लोगों ने वस्त्र उछाले।

तब पण्डित ने, उत्सव की समाप्ति पर, राजभवन पहुँच राजा से कहा, "महाराज! चूकनी राजा की माता, देवी और पुत्र को शीघ्र ही लौटा देना चाहिये।"

राजा के 'हाँ, भिजवा दो' कहने पर उसने उन तीनों का महान् सत्कार कर अपने साथ आई सेना का भी सत्कार-सम्मान कर, तीनों को बड़े ठाठ-बाट के साथ भेजा। भेंट में मिली सौ स्त्रियों और चार सौ दासियों को भी उसने नन्दा देवी के साथ भेज दिया। अपने साथ आई सेना भी उसने लौटा दी। वे बड़ी शान-बान से उत्तर-पंचाल नगर पहुँचे।

तब चूकनी राजा ने अपनी माँ से पूछा, "माँ! क्या विदेह-नरेश ने सेवा-सुश्रूषा की?"

"तात! क्या कहता है, मेरी देवता की तरह पूजा की, नन्दा देवी को माता की तरह रखा, और पंचालचण्ड को छोटा भाई बना कर रखा।"

यह सुन राजा अति संतुष्ट हुआ और उसने विदेह राजा को बहुत-सी भेंट भिजवाई। इसके बाद से वे दोनों राजा मिलकर प्रसन्नतापूर्वक रहने लगे।

19

पंचालचण्डी विदेह राजा की प्रिया थी—मन को अच्छी लगने वाली। दूसरे वर्ष उसने पुत्र को जन्म दिया। उसके दसवें वर्ष विदेह राजा मर गया। तब महोषध पण्डित ने उसके पुत्र को छत्र धारण करवा पूछा, "देव ! मैं तुम्हारे नाना चूकनी राजा के पास जाता हूं।"

"पण्डित ! मुझे छोटेपन में छोड़कर मत जाओ। मैं तुम्हें पिता मानकर सत्कार करूँगा।"

पंचालचण्डी ने भी प्रार्थना की, "पण्डित ! तुम्हारे जाने के बाद हमारा दूसरा शरण-स्थान नहीं है। मत जाओ।"

उसने चूकनी राजा को वचन दे दिया था, इसलिए लोगों के विलाप करते रहने पर भी वह अपने सेवकों को साथ ले उत्तर-पंचाल नगर जा पहुँचा। राजा ने उसके आगमन की बात सुन, उसकी अगवानी कर बड़े सत्कार से नगर में प्रवेश कराया। उसे बड़ा-सा घर दिया, किन्तु प्रथम दिये अस्सी गाँवों के अतिरक्त कुछ नहीं दिया।

उस समय भेरी नामक एक परिब्राजिका राजभवन में भोजन करती थी। वह पण्डिता थी, मेधावी थी। उसने पण्डित को कभी नहीं देखा था। केवल सुना-भर था कि वह राजा की सेवा में रहता है। पण्डित ने भी उसे कभी देखा नहीं था। केवल सुना-भर था कि वह राजभवन में भोजन करती है। नन्दा देवी पण्डित पर रुष्ट थी उसका कहना था कि पण्डित ने प्रिय-वियोग कर हमें कष्ट दिया उसने अपनी पाँच प्रिय स्त्रियों को आज्ञा दी कि पण्डित पर आरोप लगाकर राजा का मन खिन्न करने का प्रयत्न करें। वे इसका अवसर देखती हुई घूमती थीं।

एक दिन परिब्राजिका ने पण्डित को राजा की सेवा में आते देखा। वह उसे प्रणाम कर खड़ी हो गई। महोषध की परीक्षा लेने के लिये कि वह पण्डित है अथवा अपण्डित, उसने हाथ-मुद्रा से प्रश्न

पूछते हुए हाथ पसारा 'पण्डित ! परदेश से मँगवाकर राजा अब तुम्हारी सेवा करता है या नहीं ?' महोषध ने समझ लिया। उसने प्रश्न का उत्तर देते हुए मुट्ठी बन्द कर ली—'आर्ये ! मुझसे वचन ले, मुझे बुलवा अब राजा ने मुट्ठी बाँध ली।' परिव्राजिका ने हाथ सिर पर रखा—'पण्डित ! यदि कष्ट है तो मेरी तरह प्रव्रजित क्यों नहीं हो जाते ?' पण्डित ने अपने पेट पर हाथ रखा—'आर्ये ! मुझे अनेकों का पालन-पोषण करना है। प्रव्रजित नहीं हो सकता।'

नन्दा देवी द्वारा नियुक्त स्त्रियों ने खिड़की से उन दोनों की वह क्रिया देख राजा के पास जा शिकायत की, "देव ! महोषध भेरी परिव्राजिका के साथ मिलकर तुम्हारा राज्य लेना चाहता है। वह तुम्हारा शत्रु हो गया है।"

"तुमने क्या देखा-सुना ?" राजा ने पूछा।

"महाराज ! परिव्राजिका ने भोजनानन्तर उतरते समय महोषध को देख हाथ फैलाकर प्रश्न किया—'राजा को हाथ की हथेली की तरह या खलिहान की तरह बराबर करके क्या तू उसका राज्य नहीं ले सकता ?' महोषध ने हाथ की मुट्ठी बन्द कर, तलवार पकड़ने की तरह उत्तर दिया—'कुछ दिनों के बाद उसका सिर काटकर राज्य अपने हाथ में ले लूँगा।' परिव्राजिका ने हाथ सिर पर रखकर पूछा—'सिर ही काटना।' पण्डित ने अपना हाथ पेट पर रखकर कहा—'नहीं, बीच से काटूँगा।' महाराज अप्रमादी हों। महोषध को मरवा डालना योग्य है।"

राजा ने उनकी बात सुन सोचा—'पण्डित मुझसे द्वेष नहीं कर सकता। मैं परिव्राजिका से पूछूँगा।' अगले दिन परिव्राजिका के भोजन के समय उसने पास जाकर पूछा, "आर्ये ! क्या महोषध को देखा है ?"

"हाँ, महाराज ! कल भोजन करके यहाँ से जाते समय देखा है।"

"कोई बातचीत हुई ?"

"बातचीत नहीं हुई। यह सुन कि यह पण्डित और यह सोच कि यदि पण्डित होगा तो समझ जायगा, मैंने हाथ पसारकर हस्त-मुद्रा

से प्रश्न किया कि राजा का हाथ तेरे लिये खुला है, अथवा बन्द है ? क्या वह तुझे चीज़ें देता है या नहीं ?' पण्डित ने मुट्ठी बन्द कर उत्तर दिया कि राजा ने मुझ से वचन ले बुला अब हाथ संकुचित कर लिया है, कुछ नहीं देता। तब मैंने सिर को हाथ लगाया कि यदि कष्ट है तो प्रव्रजित हो जा। उसने पेट को हाथ लगाया कि मुझे बहुत जनों का पालन-पोषण करना है, बहुत जनों के पेट भरने हैं। प्रव्रजित नहीं हो सकता।"

"आर्ये ! महोषध पण्डित है !"

"हाँ, महाराज ! पृथ्वी-भर में उसके समान कोई नहीं है।"

राजा ने उसकी बात सुन उसे नमस्कार कर विदा किया। उसके चले जाने पर पण्डित ने प्रवेश किया। राजा ने उससे भी पूछा, "पण्डित ! क्या तूने भेरी परिव्राजिका देखी है ?"

"हाँ, महाराज ! कल यहाँ से निकलते समय दिखाई दी। उसने हाथ-मुद्रा से मुझसे प्रश्न किया। मैंने भी उसे वैसे ही उत्तर दिया"..... ......जैसा भेरी ने राजा से कहा।

राजा ने प्रसन्न हो, महोषध को सेनापति बना दिया। सारे काम उसे ही सौंप दिये। वह बहुत ऐश्वर्यशाली हो गया। केवल राजा ही उससे अधिक ऐश्वर्यशाली था।

तब पण्डित ने सोचा—'राजा ने एकबारगी ही मुझे इतना अधिक ऐश्वर्यशाली बना दिया है। राजा लोग कभी-कभी मरवा डालने की नीयत से भी ऐसा करते हैं। मैं इसकी परीक्षा करूँ कि वह मेरा सुहृदय है अथवा नहीं ? भेरी परिव्राजिका ज्ञानी है, वह किसी उपाय से पता लगाएगी, और कोई नहीं लगा सकता।' पण्डित बहुत-सी सुगन्धी तथा माला आदि लेकर परिव्राजिका के निवासस्थान पर पहुँचा। उसे प्रणाम कर तथा उसकी पूजा कर कहा, "आर्ये ! जिस दिन से तुमने राजा से मेरे गुण का वर्णन किया उस दिन से राजा मुझे अत्यधिक ऐश्वर्य दे रहा है। मैं नहीं जानता कि वह यह स्वाभाविक रूप से कर रहा है अथवा अस्वाभाविक रूप से ? अच्छा

होगा यदि किसी उपाय से यह पता लगे कि राजा का मेरे प्रति क्या भाव है ?"

परिब्राजिका ने 'अच्छा' कह स्वीकार किया। अगले दिन राजभवन जाते-जाते ही उसने 'जल-राक्षस' के प्रश्नों का विचार किया। उसने सोचा—'गुप्तचर की भाँति ढंग से राजा से पूछकर पता लगाऊँगी कि यह पण्डित का सुहृदय है अथवा नहीं ?' भोजनानन्तर राजा वहाँ आ उसे प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। भेरी ने सोचा—'यदि पण्डित के प्रति राजा की दुर्भावना होगी तो पूछने पर वह लोगों के सामने व्यक्त कर देगा, सो ठीक नहीं।' उसने कहा, "महाराज ! एकान्त चाहती हूं।"

तब राजा ने सभी आदमियों को चले जाने को कहा। वह बोली, "महाराज ! यदि गम्भीर समुद्र में सातों जनों—माता, नन्दादेवी, तीक्ष्ण मंत्री कुमार (भाई), धनुसेखर मित्र, पुरोहित, महोषध और आप—की नौका को मनुष्य-बलि इच्छुक राक्षस पकड़ ले तो आप किस क्रम से इनकी भेंट देकर अपने आपको मुक्त कराएँगे ?"

"आर्ये ! सबसे पहले मैं माँ की बलि दूँगा, तब भार्या की, तब भाई की, तब मित्र की, तब ब्राह्मण की, तब अपनी बलि दूँगा। महोषध की बलि दूँगा ही नहीं।"

परिब्राजिका ने जान लिया कि राजा के मन में महोषध के प्रति सुहृद-भाव है। 'किन्तु इतने-भर से पण्डित का गुण प्रसिद्ध नहीं होगा।' उसने सोचा—मैं नगरवासियों के सामने इसका गुण कहलवाऊँगी। इस प्रकार पण्डित का गुण आकाश में चन्द्रमा के समान प्रकट हो जायगा। उसने नगर के सभी लोगों को इकट्ठा करवाया। आरम्भ से फिर राजा से यही प्रश्न पूछा। राजा ने यही उत्तर दिया। तब उसने कहा,"राजन् ! माता तेरा पोषण करने वाली है। तुझे जन्म देने वाली है। दीर्घकाल तक तुझ पर अनुकम्पा करती रही है। तू उस प्राणदायिनी, छाती से लगाकर रखने वाली,

गर्भ में धारण करने वाली माँ को उसके किस अपराध के कारण राक्षस को सौंप देगा ?"

"आर्ये ! माता का मुझ पर बहुत उपकार है, फिर भी उसमें अवगुण हैं। वह तरुणियों की तरह न धारण करने योग्य गहनों को धारण करती है। द्वारपालों तथा सैनिकों के साथ देर तक हँसी-मज़ाक करती रहती है। फिर विरोधी राजाओं के पास अपने आप दूत भेजती रहती है। मैं माता के इसी दोष से उसे जल-राक्षस को दे दूंगा।"

"अच्छा राजन् ! आपकी भार्या तो गुणवती है, स्त्रियों में श्रेष्ट, अत्यन्त प्रियवादिनी, अनुगामिनी, सदाचारिणी, छाया की भाँति पीछे-पीछे चलने वाली, क्रोध-रहित है। प्रज्ञावान, पण्डिता, अर्थदर्शी अपनी भार्या को किस अपराध के कारण तू राक्षस को दे देगा ?"

"आर्ये ! यह सब ठीक है लेकिन कामक्रीड़ा में अनुरक्त तथा अनर्थकारी, वासना के वशीभूत हुआ जान वह मुझे अपने पुत्र-पुत्रियों को दिये गए, न माँगने योग्य गहनों की याचना करती है। राग के वशीभूत हुआ मैं छोटी-बड़ी सभी चीज़ें दे देता हूं। न देने योग्य चीज़ों को देकर पीछे पछताता हूं। मैं अपनी भार्या के इसी दोष के कारण उसे जल-राक्षस को दे दूंगा।"

"अच्छा राजन् ! तीक्षणमन्त्री कुमार तो तेरा छोटाभाई है, जिसने जनपद की अभिवृद्धि की और जो तुम्हें परदेस से अपने घर लौटा लाया, जिसने दूसरे राज्यों को अभिभूत कर बहुत धन प्राप्त किया। उस धनुर्धारियों में श्रेष्ठ, शूरवीर तीक्षण-मन्त्री कुमार को किस अपराध के कारण जल-राक्षस को सौंप देगा ?"

"आर्ये ! वह घमण्डी है। वह सोचता है कि उसने जनपदों की अभिवृद्धि की और परदेश से मुझे घर लौटा लाया, दूसरे राज्यों को अभिभूत कर बहुत धन लाया। वह कहता है कि वह धनुर्धारियों में श्रेष्ठ है, शूर है, वह तीक्षण मन्त्री है, उसने ही राजा को सुखी किया है। अब वही भाई मेरी उपेक्षा करता है। अब वह पहले की तरह भेंट

करने भी नहीं आता। इसी दोष के कारण मैं भाई को जल-राक्षस को सौंप दूंगा।"

"अच्छा राजन्! किन्तु यह धनुसेखर कुमार तो तुम्हारा बड़ा स्नेही तथा उपकारी है, तुम दोनों का जन्म एक ही समय हुआ है, दोनों पंचाल हो, दोनों मित्र हो, दोनों समवयस्क हो। वह तुम्हारे पीछे-पीछे चलने वाला है। तुम्हारे दुख में दुखी और सुख में सुखी रहता है। वह तुम्हारे काम करने के लिये हमेशा तत्पर रहता है। उसे किस कारण से जल-राक्षस को सौंप देगा?"

"आर्य! यह पहले मेरे साथ हँसी-मज़ाक करता रहा है। आज भी उसी तरह चिरकाल तक हँसी-मज़ाक करता है। मैं जब एकान्त में अपनी भार्या से भी बातचीत करता होता हूं तो भी वह बिना पूर्व सूचना दिये घुस आता है। इसी कारण से, अवसर आने पर, मैं उसे जल-राक्षस को सौंप दूंगा।"

"राजन्! पुरोहित तो तेरा बहुत उपकारी है, सब लक्षणों का ज्ञाता है, सभी जानवरों की भाषा जानता है, सब शास्त्रों का ज्ञाता है, सभी उत्पातों तथा स्वप्नों का भाष्यकर्त्ता है। बाहर जाने तथा बाहर से आने के सभी नक्षत्रों से परिचित है। पृथ्वी तथा आकाश के सभी दोषों से परिचित है, ऐसे ब्राह्मण को तू किस अपराध के कारण जल-राक्षस को सौंप देगा?"

"आर्य! यह परिषद् के बीच में भी मेरी ओर क्रुद्ध की भाँति आँखें फाड़-फाड़कर देखता है। इसलिए मैं इस स्थिर-भौं वाले, भयानक शक्ल वाले ब्राह्मण को जल-राक्षस को सौंप दूंगा।"

"महाराज! आपने अपनी माता से आरम्भ करके इन पाँचों जनों को कहा कि मैं जल-राक्षस को सौंप दूंगा। और यह भी कहा कि इस प्रकार की श्री तथा ऐश्वर्य की चिन्ता न कर यह जीवन भी महोषध के लिये बलिदान कर दूंगा। सागर से घिरी हुई पृथ्वी पर तू अमात्यों से घिरा हुआ राज्य करता है। तेरा राष्ट्र चारों दिशाओं में फैला है। तू विजयी है। तू बलवान है। तू पृथ्वी का एक राजा है। तेरा ऐश्वर्य महान् है। मोतियों, मणियों तथा कुण्डलों से लदी सोलह

हज़ार तेरी स्त्रियाँ हैं; जो नाना जनपदों से आई हैं, नारियाँ हैं, जो सुन्दर हैं तथा जो देव-कन्याओं के समान हैं। हे क्षत्रिय ! जो सर्वांग सम्पूर्ण होते हैं, जो हर तरह से स्मृद्ध होते हैं तथा सुखी होते हैं, उन्हें जीवन 'प्रिय' कहा गया है। तो फिर तू किस कारण से अथवा किस हेतु से पण्डित को बचाने के लिए अपने प्राण का त्याग करेगा ?"

"आर्ये ! जब से महोषध मेरे हाथ आया है तब से मैंने आज तक इस पण्डित का एक भी दोष नहीं देखा। यदि किसी समय मैं इससे पहले मर जाऊँ तो महोषध पण्डित मेरे पुत्रों तथा प्रपुत्रों को सुख पहुँचायेगा। यह अनागत और वर्तमान बातों का ध्यान रखता है। इस निरपराध को मैं जल-राक्षस को नहीं सौंपूँगा।"

तब परिब्राजिका ने सोचा—'इतने से भी पण्डित के गुणों की प्रसिद्धि नहीं होगी। सारे राज्य के बीच, सागर के ऊपर सुगन्धित जल छिड़कने के समान उन्हें प्रकट कराऊँगी।' वह राजा को लिए प्रासाद के नीचे उतरी और राजांगन में आसन बिछा, उस पर बैठ उसने जनता को इकट्ठा करवाया। फिर उसने राजा से, आरम्भ से अन्त तक में 'जल-राक्षस' प्रश्न पूछे। राजा ने भी उक्त प्रकार से उत्तर दिये।

तब परिब्राजिका ने जनता को सम्बोधित कर कहा, "हे पंचाल नागरिको ! चूकनी के इस अभिभाषण को सुनो। यह पण्डित को बचाने के लिये अपने प्राण तक का त्याग कर सकता है। इस प्रकार यह प्रज्ञा, महान अर्थों के सिद्ध करने वाली है, समर्थ है और कल्याणकारी है। यह इस लोक में हितकर होती है और परलोक में भी सुख देती है।"